इतिहास दिवाकर

त्रैमासिक अनुसंधान पत्रिका

वर्ष ३ अंक १ चैत्र मास कलियुगाब्द ५११२ अप्रैल २०१०

मार्गदर्शक :
ठाकुर राम सिंह
डॉ० शिवाजी सिंह
चेतराम
इरविन खन्ना

सम्पादक :
डॉ० विद्या चन्द ठाकुर

सह सम्पादक
चेतराम गर्ग

सम्पादक मण्डल :
डॉ० रमेश शर्मा
डॉ०ओम प्रकाश शर्मा
प्रो० सतीश चन्द्र
सुश्री चारु मित्तल

टंकण एवं सज्जा :
अश्वनी कालिया

सम्पादकीय कार्यालय :
ठाकुर जगदेव चन्द स्मृति शोध संस्थान,
नेरी, गांव—नेरी, डाकघर—खगल
जिला—हमीरपुर—१७७००१ (हि०प्र०)
दूरभाष : ०१९७२—२०३०४४

मूल्य:
प्रति अंक —१५.०० रुपये
वार्षिक — ६०.०० रुपये

अनुक्रमणिका

सम्पादकीय

वर्ष प्रतिपदा

चैत्र शुक्ल प्रतिपदा	ठाकुर रामसिंह	३
देश की नयी पीढ़ी को नव संवत्सर का खुला पत्र	प्रदीप राठौर	७

संवीक्षण

संकल्प का सार	राम भाऊ साठे	१०

जगत् विभूति

विक्रमादित्य की राजसभा के रत्न : वराहमिहिर	लज्जा राम तोमर	१४

राष्ट्र विभूति

हरियाणवी भाषा में महाराणा प्रताप	रामशरण युयुत्सु	१८

विविधा

मुसलमानों से संवाद रचना के नये प्रयास	डा. कुलदीप चन्द अग्निहोत्री	२८

सम्पादकीय

नव संवत्सर : कलियुगाब्द 5112

चैत्र *शुक्ल प्रतिपदा को भारतीय सनातन कालगणना के अनुसार नये वर्ष का शुभारम्भ होता है, इसलिए यह प्रतिपदा वर्ष प्रतिपदा कहलाती है। यह सनातन कालगणना अन्य कालगणनाओं की भांति किसी व्यक्ति या घटना से सम्बन्धित नहीं है, अपितु यह काल पर आधारित है तथा काल पर आधारित होने से पूर्णरूपेण वैज्ञानिक है जो कि वृहद् रूप में कल्प, मन्वन्तर और युगों में विभाजित है। भारत के ऋषि मनीषियों ने इस कालगणना को किसी भी धार्मिक अनुष्ठान में अनिवार्य रूप से किए जाने वाले संकल्प पाठ के विधान द्वारा सदा-सर्वदा के लिए संरक्षित किया है। संकल्प के आरम्भ में कालक्रम के वाचन के अनुसार सृष्टि सर्जक भगवान् ब्रह्मा की आयु के दूसरे परार्ध में श्वेतवाराह कल्प के अट्ठाइसवें कलियुग का प्रथम चरण प्रचलित है –*

ॐ अद्य ब्रह्मणोऽह्नि द्वितीयपरार्द्धे श्रीश्वेतवाराहकल्पे वैवस्वतमन्वन्तरेऽष्टाविंशतितमे कलियुगे कलि प्रथम चरणे..........................

कलियुग के प्रथम चरण के अन्तर्गत इस समय चैत्र सौर मास 3 प्रविष्टे, विक्रमी सम्वत् 2067 एवं ईस्वी सन् 16 मार्च, 2010 से कलियुगाब्द का 5112 वां वर्ष आरम्भ हुआ है। यह हमें सभी भारतीय पंचांगों से ज्ञात होता है। कलियुगाब्द को कलि सम्वत् और युगाब्द भी कहते हैं, लेकिन कलियुग के स्पष्ट बोध की दृष्टि से इसे कलियुगाब्द कहना अधिक उपयुक्त है। कई बार प्रश्न सामने आता है कि जिस प्रकार पंचांगों में इस वर्ष कलि संवत् 5111 लिखा है, तो यह 5112 कैसे है ? इस विषय में ध्यान देने की आवश्कता है कि पंचांग में कलि संवत् के गत वर्ष का उल्लेख होता है। जैसा कि इस वर्ष उल्लेख है –

अथ श्रीमन्नृपति वीरविक्रमादित्यराज्यात् संवत् 2067 शालिवाहनशके 1932 साम्प्रतं कल्पादिगतवर्षाणि 1,97,29,49,111 कलिगतवर्षाणि 5111 भोग्यकलिवर्षाणि 4,26,889 अथास्मिन् वर्षे बार्हस्पत्यमानेन शोभननामक संवत्सरोऽस्ति......... ।

इस काल विवरण के अनुसार शोभन नामक विक्रमी संवत् 2067 के आरम्भ होने तक कलियुग के 5111 वर्ष बीत चुके हैं। अतः अब वर्ष प्रतिपदा से नव संवत्सर कलियुगाब्द 5112 आरम्भ हुआ है।

सर्वशक्तिमान ईश्वर की अपार कृपा से नव संवत्सर कलियुगाब्द 5112 सर्वमंगलमय हो।

विनीत,

डॉ0 विद्या चन्द ठाकुर

चैत्र शुक्ल प्रतिपदा

केवल भारत का ही नहीं अपितु संपूर्ण मानव सृष्टि का पूजनीय दिन है

● ठा० राम सिंह

नव वर्ष : इस समय विश्व में ७० से अधिक कालगणनायें प्रचलित हैं। उनसे संबन्धित देशों में उनके नववर्ष अपने अपने हिसाब-किताब के अनुसार आते हैं और अपने अपने देश की सांस्कृतिक और धार्मिक परम्पराओं और मान्यताओं के अनुसार मनाये जाते हैं। परंतु इन सभी कालगणनाओं के बारे में महत्त्वपूर्ण तथ्य यह है कि इनका आधार सारे ब्रह्माण्ड को व्याप्त करने वाला कालतत्त्व न होकर व्यक्ति विशेष, घटना विशेष, वर्ग विशेष, सम्प्रदाय विशेष अथवा देश विशेष है। इसी कारण इन कालगणनाओं से संबन्धित देशों की संस्कृतियां भी आदि है।

भारतीय संस्कृति : विश्व में केवल भारतीय संस्कृति ही एक ऐसी संस्कृति है जो अनादि है क्योंकि इसका मूल वेद है। वेदों में दिये सिद्धान्त शाश्वत सत्य और नित्य हैं। प्राचीनतम होने पर भी वे सदैव नवीन है। उनमें आज तक कोई भूल निकाली नहीं जा सकी है। यदि कभी विज्ञान से मतभेद हो गया तो भी वैज्ञानिकों को घूम-फिर कर पुन: वेदों की ही शरण में आना पड़ा है। वेदों के सिद्धान्त अपरिवर्तनीय हैं और इसी कारण ये परिस्थिति निर्पेक्ष है।

वर्ष प्रतिपदा का इतिहास : वर्तमान मानव सृष्टि के बारे में विद्वानों में बहुत मतभेद हैं। पश्चिम के खगोल शास्त्री, दार्शनिक, विचारक और उनके धर्मग्रन्थ इसे ६-७ हजार वर्ष पुरानी मानते हैं। परंतु भूगर्भीय क्षेत्र में निरंतर हो रहे अनुसंधानों के कारण यह बात अब वैज्ञानिक भी स्वीकार करने लगे हैं कि मानवीय सृष्टि की प्राचीनता मानव की कल्पनाशक्ति से परे हैं। भारतीय कालतत्त्व विशेषज्ञ मनीषियों या वेदों में दिये विवरणानुसार यह मानवीय सृष्टि लगभग २ अरब वर्ष पुरानी है। भूगर्भीय क्षेत्र में पाश्चात्य वैज्ञानिकों के निरंतर जो अनुसंधान हो रहे हैं उन में प्राप्त तथ्यों के अनुसार भी मानवीय सृष्टि की प्राचीनता ६-७ हज़ार वर्ष के बजाए २ अरब वर्ष के निकट जा पहुंची है। इस से पाश्चात्य विद्वानों की पूर्व अवधारणा कि यह विश्व ६-७ हज़ार वर्ष पूर्व बना था, धराशाई हो जाती है। अब उसमें परिवर्तन अनिवार्य हो गया है।

अब जिस पृथ्वी ग्रह पर हम रहते हैं इसके बारे में भी विचार करना विषय के प्रतिपादन के लिये लाभदायक होगा। विश्व के प्राय: सभी भूगर्भ शास्त्री यह मानते हैं कि

इस पृथ्वी का पहले अपना कोई अस्तित्व नहीं था। यह सूर्य का हिस्सा थी। प्राकृतिक और दैवी कारणों से आज से ४,१३,२९,४९,१११ वर्ष पूर्व यह हिस्सा सूर्य से पृथक हो गया। यही इस पृथ्वी की जन्म तिथि है।

उस समय यह पृथ्वी पूर्णत: जल मग्न थी और इसका तापमान २००० अंश था। इस को ठण्डा होने में लाखों वर्ष लगे और जब इस का तापमान २०० अंश तक पहुंच गया तब इसमें प्राकृतिक और दैवी कारणों से भूनिर्माण शुरू हुआ। कालक्रम में जो इसमें से प्रथम हिस्सा बाहर आया उसका नाम 'सुमेरु पर्वत' है। इसी सुमेरु पर्वत के एक पवित्र भूखंड पर आज से १,९७,२९,४९,१११ वर्ष पूर्व चैत्र शुक्ल प्रतिपदा को रविवार के दिन प्रात: ९.०० बजे प्रथम मानव का प्रादुर्भाव इस अद्‌भुत विश्व के महाविकल्पक, सृष्टि निर्माता ब्रह्मा के रूप में हुआ। तदनुसार मार्च १६, सन् २०१० को उनका १,९७,२९,४९,१११ वां वर्ष पूरा होकर १,९७,२९,४९,११२ वां वर्ष प्रारम्भ होने जा रहा है। अत: इसी चैत्र शुक्ल प्रतिपदा से नव वर्ष के प्रथम मास का प्रथम दिन शुरू हुआ।

वैदिक संवत : वैदिक संवत का इस वर्ष १,९५,५८,८५,११२ वां वर्ष होगा क्योंकि धरती को अपना रूप संवारने में १,७०,६४,००० वर्ष लगे हैं। अत: इसी पृथ्वी पर प्रथम मानवोत्पत्ति के ही दिन से वर्ष प्रतिपदा आरम्भ होती है। यही इसका इतिहास है।

वर्ष प्रतिपदा का महत्त्व: भारतीय संस्कृति में चैत्र शुक्ल प्रतिपदा का बहुत बड़ा महत्त्व है क्योंकि इस पृथ्वी पर पहले मानव की उत्पत्ति इसी दिन हुई। इस कारण यह दिन हम भारतवासियों के ही लिये नहीं सारी मानव सृष्टि के लिये अत्यंत पूजनीय है।

इस शुभ दिन देश भर में अनेक सामाजिक और धार्मिक अनुष्ठानों का आयोजन होता है। शुभ कामनाओं का आदान प्रादान करने के लिये अभिनन्दन पत्र अपने सम्बन्धियों और इष्ट मित्रों को भेजे जाते हैं।

वर्ष फल का पाठ : देश के हर नगर और हर गांव परिवारों में नये वर्ष का फल सुनने के लिए पारिवारिक कार्यक्रमों का आयोजन किया जाता है। इन कार्यक्रमों में कुल के पुरोहित आते हैं। परिवार के सारे सदस्य एक स्थान पर एकत्रित हो जाते हैं और पुरोहित नये पंचांग से नये वर्ष के फल के बारे में बताते हैं। बाद में प्रसाद और मिठाईयां बांटी जाती हैं। इस शुभ दिन के उपलक्ष्य में नयी वस्तुयें खरीदने का भी रिवाज है।

चैत्र शुक्ल प्रतिपदा के साथ कुछ ऐसी विशेष घटनायें संबन्धित हैं जिन के कारण इसका महत्त्व और भी अधिक बढ़ जाता है– यथा प्रभु रामचन्द्र का राज्याभिषेक, धर्मराज युधिष्ठर का राजतिलक, विक्रमादित्य के विक्रमी संवत् और शालीवाहन के शक संवत् का शुभारम्भ, स्वामी दयानन्द द्वारा आर्य समाज की स्थापना, प्रखर देशभक्त संगठन राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के निर्माता डॉ० केशवराव बलिराम हेडगेवार का जन्म दिन।

ईसाई संवत का इतिहास : ईस्वी सन् का प्रारंभ ईसा की मृत्यु पर आधारित है। परंतु

उनका जन्म और मृत्यु अभी भी अज्ञात है। ईस्वी सन् का मूल रोमन संवत है। यह ७५३ ईसा पूर्व रोमन साम्राज्य के समय शुरू हुआ था। उस समय उस संवत् में ३०४ दिन और १० मास होते थे। उस समय जनवरी और फरवरी के मास नहीं थे। ईसा पूर्व ५६ वर्ष में रोमन सम्राट जुलियस सीज़र ने वर्ष ३५५ दिन का माना। बाद में इसे ३६५ दिन का कर दिया। उसने अपने नाम पर जुलाई मास भी बना दिया। बाद में उसके पोते ऑगस्टस ने अपने नाम पर अगस्त का मास बना दिया। उसने महीनों के बाद दिनों की संख्या भी तय कर दी। इस प्रकार ईस्वी सन् में ३६५ दिन और १२ मास होने लगे। फिर भी इस में अंतर बढ़ता गया क्योंकि पृथ्वी को सूर्य की एक परिक्रमा पूरी करने के लिये ३६५ दिन ६ घंटे, ९ मिनट और ११ सैकेंड लगते हैं। ईस्वी सन् १५८३ में इसमें १८ दिन का अंतर आ गया। तब ईसाईयों के धर्मगुरु पोप ग्रेगरी ने ४ अक्तूबर को १५ अक्तूबर बना दिया और आगे के लिये आदेश दिया कि ४ की संख्या से विभाजित होने वाले वर्ष में फरवरी मास २९ दिन का होगा। ४०० वर्ष बाद इसमें १ दिन और जोड़कर इसे ३० दिन का बना दिया जायेगा। इसी को ग्रेगरी कैलण्डर कहा जाता है जिसे सारे ईसाई जगत ने स्वीकार कर लिया।

ईसाई संवत् के बारे में यह भी ध्यान रखना चाहिये कि पहले इस का आरंभ २५ मार्च से होता था परंतु १८ वीं शताब्दी से इसका आरंभ १ जनवरी से होने लगा। इस कलैण्डर में जनवरी से जून तक के नाम रोमन देवी-देवताओं के नाम पर हैं। जुलाई, अगस्त का सम्बन्ध सम्राट जुलियस सीज़र और उसके पोते ऑगस्टस से है। सितम्बर से दिसम्बर तक के मासों के नाम रोमन संवत् के मासों की संख्या के आधार पर हैं। जिस का क्रमश: अर्थ ७,८,९, और १० है। इससे ईस्वी सन् के खोखलेपन की पोल और ईसाई जगत की अवैज्ञानिकता जग जाहिर हो जाती है।

भारत में मासों का नामकरण : भारत में मासों का नामकरण प्रकृति पर आधारित है। यथा– चित्रा नक्षत्र वाली पूर्णिमा के मास का नाम चैत्र है, विशाखा का वैशाख है, ज्येष्ठा का ज्येष्ठ है, श्रवण का श्रावण, उत्तरा भाद्रपद का भाद्रपद, अश्विनी का आश्विन, कृतिका का कार्तिक, मृगशिरा का मार्गशीर्ष, पुष्य का पौष, मघा का माघ और उतरा फाल्गुनी का फाल्गुन मास होता है। इसी तरह भारत में ३५४ दिन के चांद्र वर्ष और ३६५ दिन, ६ घण्टे, ९ मिनट ११ सैकेण्ड के अन्तर को दूर करने के लिये हमारे ज्योतिषियों ने २ वर्ष ८ मास १६ दिन के उपरांत एक अधिक मास या पुरुषोत्तम अथवा मल-मास की व्यवस्था करके कालगणना की शुद्धता और वैज्ञानिकता बरकरार रखी है।

उपरोक्त तथ्यों के सन्दर्भ में यही उचित होगा कि हम सभी भारतवासी पूर्णत: वैज्ञानिकता पर आधारित अपनी युगों की वैज्ञानिक एवं वैश्विक भारतीय कालगणना प्रयोग करें। इस कालगणना का प्रथम दिवस चैत्र शुक्ल प्रतिपदा श्री ब्रह्मा जी का सृष्टि रचना का दिन होने के कारण संपूर्ण सृष्टि के लिये इस दिन का अत्यन्त महत्त्व है।

इधर-उधर से तोड़-जोड, मनगढ़ंत कल्पनाओं, मिथ्या सिद्धान्तों और कहीं की ईंट, कहीं का रोड़ा, भानुमति ने कुनबा जोड़ा के नमूने पर बने ईस्वी सन् के नववर्ष को ईसाई जगत मनायें, लेकिन यूरोपीय ईसाई साम्राज्य के प्रभाव काल में यह ईसाई कालगणना हम पर थोपी गई थी। उस समय की मानसिक दासता के कारण हम ईसाई वर्ष को मनाते चले आ रहे हैं। यह हमारे लिये लज्जा का विषय है। हम इसका परित्याग कर वर्ष प्रतिपदा के दिन अपना भारतीय नव वर्ष मनायें। इसी में राष्ट्रीय मान-मर्यादा और प्रतिष्ठा समाहित है।

समाचार पत्र के स्वामित्व एवं अन्य विषयों से सम्बंधित विवरण

फार्म –४ (नियम ८ देखिए)

१. प्रकाशन स्थल	:	ठाकुर जगदेव चन्द स्मृति शोध संस्थान हमीरपुर नेरी
२. प्रकाशन तिथि	:	अप्रैल, जुलाई, अक्तूबर, जनवरी माह का प्रथम सप्ताह
३. मुद्रक का नाम	:	चेतराम
क्या भारतीय नागरिक है?	:	हां
पता	:	ठाकुर जगदेव चन्द स्मृति शोध संस्थान हमीरपुर नेरी गांव नेरी, डाकघर खगल, जिला हमीरपुर–१७७००१ हिमाचल प्रदेश।
४. प्रकाशक का नाम	:	चेतराम
क्या भारतीय नागरिक है?	:	हां
पता	:	ठाकुर जगदेव चन्द स्मृति शोध संस्थान हमीरपुर नेरी गांव नेरी, डाकघर खगल, जिला हमीरपुर–१७७००१ हिमाचल प्रदेश।
५. सम्पादक का नाम	:	डॉ० विद्या चन्द ठाकुर
क्या भारतीय नागरिक है?	:	हां
पता	:	ठाकुर जगदेव चन्द स्मृति शोध संस्थान हमीरपुर नेरी गांव नेरी, डाकघर खगल, जिला हमीरपुर–१७७००१ हिमाचल प्रदेश।
६. उन व्यक्तियों के नाम व पत्ते जो समाचार पत्र के स्वामी हों तथा जो समस्त पूंजी के सांझेदार या हिस्सेदार हों।	:	ठाकुर जगदेव चन्द स्मृति शोध संस्थान हमीरपुर नेरी गांव नेरी, डाकघर खगल, जिला हमीरपुर–१७७००१ हिमाचल प्रदेश।

मैं चेतराम प्रकाशक एवं मुद्रक इतिहास दिवाकर एतद् द्वारा घोषित करता हूं कि मेरी अधिकृत जानकारी एवं विश्वास के अनुसार ऊपर दिये गए विवरण सत्य है।

हस्ता/–
चेतराम
प्रकाशक
दिनांक १ मार्च, २०१०

देश की नयी पीढ़ी को नव संवत्सर का खुला पत्र

● डॉ. प्रदीप राठौर

हैलो, भारत की नयी पीढ़ी!

मैंने तुम्हें जान-बूझकर 'हैलो' कहकर सम्बोधित किया है, हालाँकि यह शब्द मेरी जुबान पर चढ़ा हुआ नहीं है। कुछ और कह कर तुम्हें सम्बोधित करता, तो शायद तुम्हारे साथ आत्मीयता स्थापित न कर पाता। पहचाना मुझे, मैं शोभन संवत्सर हूँ, तुम्हारा नया वर्ष। मैंने जब दस्तक दी तो तुम्हें सुनाई नहीं दी। मेरे अपने देश में मेरा कोई स्वागत नहीं हुआ। क्या तुमने मुझे भुला दिया है? जब विदेशियों का नववर्ष ३१ दिसम्बर की रात को आया था, तब तो तुम बहुत खुश थे। महीनों पहले इस दिन के आयोजन में लीन हो गए थे। पूरा बाज़ार नववर्ष के बधाई के कार्ड़ों से भरा पड़ा था। दुकानें ऐसी सज़ी थीं, मानों कोई विशेष मेहमान आने वाला हो। होटलों में आधी रात तक नाच-गाना हुआ था। जो बाहर नहीं गए वे आधी रात तक टेलिविज़नों से चिपके बैठे थे। एस.एम.एस. के जरिए बधाई-सन्देशों की बाढ़ आ गई थी। मैंने सुना था मोबाइल कम्पनियों के नेटवर्क भी 'जाम' हो गए थे। और जब मैं आया हूँ तो चारों ओर खामोशी और सूनापन है। इक्का-दुक्का लोगों ने मुझे याद किया, मुझे मालूम है, ऐसे लोगों को तुम अवश्य ही 'दकियानूस' कहोगे। तुम्हारी 'मॉडर्न पीढ़ी' तो मुझे पूरी तरह से भूल गई। तभी तो अपने देश में मैं बेगाना-सा बनकर आया हूँ।

हे नयी पीढ़ी! वह विदेशियों का नया साल था, जिसे तुमने धूमधाम से मनाया, भारतीयों का नहीं था। भारतीयों का नया साल तो मैं हूँ। लगता है कि मुझे तुम्हें अपना परिचय देना होगा। मैं भारतीय नववर्ष हूँ। मैं हर वर्ष चैत्र शुक्ल प्रतिपदा को आता हूँ। देश के अलग-अलग स्थानों पर अलग-अलग रूप में मैं मनाया जाता रहा हूँ। इस वर्ष मेरा नाम शोभन संवत्सर है। ज्योतिषियों की शब्दावली में बात करूं तो इस वर्ष मेरा राजा मंगल और मन्त्री बुध है। आज से कलियुगाब्द ५११२ आरम्भ हो रहा है। तुम्हारी जानकारी के लिए बताना चाहता हूँ कि भारतीय काल गणना में चार युग माने गए हैं — सतयुग, त्रेतायुग, द्वापरयुग और कलियुग। प्रत्येक युग के वर्ष निश्चित किए गए हैं। कलियुगाब्द ५११२ का अर्थ है कि कलियुग आरम्भ हुए ५१११ वर्ष बीत चुके हैं। कलियुग की अवधि ४,३२,००० वर्ष मानी गई है। हमारी कालगणना के अनुसार चार युगों से एक महायुग बनता है, ७१ महायुगों से एक मन्वन्तर और १४ मन्वन्तरों से एक कल्प बनता है। इस प्रकार *भारतीय पञ्चाङ्ग* करोड़ों वर्ष पीछे तक जाता है। जबकि ग्रेगेरियन कैलण्डर को तुम अपनाए बैठे हो वह तो कुल दो हजार वर्ष पुराना है। ५ हजार साल पहले महाभारत हुआ था। वह द्वापर युग का अन्त एवं कलियुग का आरम्भ था।

पाश्चात्य पञ्चाङ्ग तो वहाँ तक ही नहीं पहुंच पाता, उससे पूर्व के युगों को वह कैसे समेट पाएगा ?

तुम 'मॉडर्न' बन गए हो, हमारी शिक्षा-प्रणाली ने तुम्हें ऐसा बनाया है। मैं जानता हूँ कि तुम्हें जनवरी,फ़रवरी भली-भाँति याद हैं, चैत्र, वैशाख, ज्येष्ठ नहीं। 'ए बी सी' तुम्हारी जुबान पर धरी रहती है, कोई 'क ख ग' सुनाने को कहे तो तुम बगलें झांकने लगते हो। ताऊ, चाचा, बुआ, फूफा, मौसी, माता, पिता आदि तो तुम्हें गंवारों के शब्द लगते हैं। मॉम, डैड, अंकल, आण्टी शब्दों में तुम्हें प्रेम, अपनेपन एवं आधुनिकता के दर्शन होते हैं। नर्सरी में ही अध्यापकों ने तुम्हें 'हमटी डमटी सैट ऑन ए बॉल' या 'लन्दन ब्रिज इज़ फॉलिंग डाउन' कविता रटाई थी, कबीर, सूर, तुलसी या मीरा का पद नहीं। यही कारण है कि तुम बड़े होने पर अंग्रेजी में बात करने में बड़प्पन समझते हो, जबकि हिन्दी तो तुम्हारी दृष्टि में गंवारों की भाषा है। कसूर तुम्हारा नहीं है, हमारी शिक्षा-प्रणाली का है, जिसने तुम्हें भारतीय कम और अभारतीय अधिक बनाया है। इसलिए तुम्हें सन्त वेलेण्टाइन का नाम तो याद रहता है, सन्त कबीर या सन्त रैदास का नहीं। तुम्हें मालूम नहीं कि विक्रमी संवत् किस चिड़िया का नाम है। तब तुम्हें यह कैसे मालूम होगा कि हमारे अधिकतर पर्व और जयन्तियां विक्रमी संवत् के आधार पर ही मनाई जाती हैं, जैसे — होली, दीपावली, दशहरा, रक्षाबन्धन, श्रीकृष्ण जन्माष्टमी, श्री गुरुनानक जयन्ती, श्री गुरुगोविन्द सिंह जयन्ती, महर्षि वाल्मीकि जयन्ती, सन्त रविदास जयन्ती आदि। यह बहुत बड़ी विडम्बना की बात है कि मुझे तुम्हें अपना परिचय देना पड़ रहा है। तुम्हारे बाप-दादा तो मुझे अच्छी तरह जानते थे। तुम्हारे पूर्वज जनवरी-फरवरी नहीं बोलते थे। महीनों के नामों को वह चैत्र, वैशाख, माघ और पौष आदि नामों से जानते थे। उन्हें पता था कि बिहारी के दोहे में जेठ की दुपहरी में छाया भी छाया की तलाश क्यों करती है। पौह अथवा पौष सुनते ही उन्हें ठिठुरन की अनुभूति होती थी। वे समझते थे कि 'सावन के अन्धे को सब हरा-हरा' क्यों दिखाई देता है। 'सावन हरे न भादो सूखे' मुहावरे का अर्थ उन्हें अपनी सहज-बुद्धि से ही ज्ञात था। उन्होंने अपनी उस संस्कृति को सहेज कर रखा था जो युगा-युगों से अबाध गति से बहती चली आई है। जो अपनी कुछ विशेषताओं के कारण सदैव जीवन्त रही। यूनान, मिस्र और रोम जैसी संस्कृतियां काल की ग्रास बन चुकी हैं, लेकिन हमारी सभ्यता और संस्कृति सदैव जिन्दा रही। तुर्कों, मुगलों और अंग्रेजों का शासन भी उसे मिटा नहीं पाया। लेकिन जो कुछ शताब्दियों में नहीं हुआ, वह कुछ बीते वर्षों में हुआ है। गत दो-तीन दशकों में हमारी संस्कृति को नष्ट करने की साज़िश रची गई। बहुराष्ट्रीय कम्पनियों द्वारा हमारे मूल्यों और परम्पराओं को छिन्न-भिन्न करने के सुनियोजित कार्यक्रम बनाए गए। इस सब का ही परिणाम है कि तुम सच्चाईयों से बेखबर होकर पाश्चात्य भोगवादी संस्कृति की चकाचौंध में अन्धे होकर तथा उनके षड़यन्त्रों के कुचक्रों का शिकार होकर अपनी परम्पराओं और जीवन-मूल्यों को भूलते जा रहे हो।

मैं तुम्हें अपने से जुड़ी कुछ ऐतिहासिक जानकारी देना चाहता हूँ, जिसे जानना हर भारतीय के लिए आवश्यक है। हमारे देश में अनेक संवत् चलाए गए थे, लेकिन

इनमें सबसे अधिक प्रसिद्ध विक्रमी संवत् है। इसका नाम मालवा जाति के उज्जैन नरेश विक्रमादित्य के नाम पर रखा गया है। वैसे तो हमारे यहाँ अनेक प्रतापी राजाओं को 'विक्रमादित्य' की उपाधि दी जाती रही है, यथा चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य, समुद्रगुप्त विक्रमादित्य। लेकिन विक्रमी संवत् का सम्बन्ध जिस विक्रमादित्य से है, यह उनकी उपाधि नहीं, अपितु नाम था। उन्होंने शकों को पराजित कर भारत को विदेशी आक्रान्ताओं से मुक्त कराया था। इसलिए इन्हें 'शकारि' भी कहा जाता है। इनके शासन काल में देश में स्वर्ण-युग था। कालिदास आदि नवरत्न इन्हीं के शासन काल में थे। कृतज्ञ राष्ट्र ने इस प्रजापालक, वीर और प्रतापी राजा के नाम से जुड़े विक्रमी संवत् को स्वीकार किया।

इस दिन का केवल इतना ही महत्त्व नहीं है, इस दिन के साथ अनेक ऐसी ऐतिहासिक एवं पौराणिक घटनाएँ जुड़ी हैं, जो इसे विशेष बनाती हैं। लगभग दो अरब वर्ष पूर्व ब्रह्माजी ने सृष्टि की उत्पत्ति इसी दिन की थी। मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम का राज्याभिषेक इसी दिन हुआ था। प्रसिद्ध सिक्खों के गुरु श्री अंगददेवजी, तथा संविधान निर्माण में महती भूमिका निभाने वाले डॉ. भीमराव अम्बेदकर का जन्म भी इसी दिन हुआ था। महर्षि दयानन्द सरस्वती ने आर्य समाज की स्थापना इसी दिन की थी। इसी दिन माँ दुर्गा के नवरात्र प्रारम्भ होते हैं। आन्ध्र प्रदेश में मेरे आगमन को 'उगादि' के रूप में मनाया जाता है तो कश्मीर में 'नौरोज' के रूप में। प्रकृति में भी जो परिवर्तन चैत्र के आगमन पर होते हैं, वे ग्रेगेरियन नववर्ष के आरम्भ के समय नहीं होते। मेरे आगमन के समय मधुमास बसन्त आ जाता है। वृक्षों पर नयी कोपलें फूटती हैं, हवा में शीतलता के साथ-साथ सुगन्धि भी भर जाती है। गर्म कपड़ों को छोड़ कर हल्के कपड़े पहनने का समय आ जाता है। विद्यार्थी नयी कक्षाओं में पहुंचकर नवीनता का अनुभव करते हैं। मेरे कहने का अभिप्राय यह है कि जन-जीवन एवं प्रकृति में जो परिवर्तन मेरे आगमन पर होता है, ग्रेगेरियन नव-वर्ष के आगमन पर नहीं होता।

अच्छा! बहुत बातें हो चुकीं। आशा करता हूँ कि मेरी बातों ने तुम्हारे संवेदनशील हृदय को जरूर छुआ होगा। अपेक्षा करूँगा कि पाश्चात्य संस्कृति के अन्धानुकरण से बचते हुए आप अपनी संस्कृति, अपने उदात्त मूल्यों को कभी विस्मृत नहीं करोगे। देर आयद दरुस्त आयद। अगले वर्ष एक नए नाम से फिर आऊंगा। आशा करता हूँ कि अगले वर्ष तुम मुझे भूलोगे नहीं। मेरे स्वागत के लिए पहले से तैयार रहोगे और इस दिवस को खूब धूमधाम से मनाओगे। तुम्हारे उज्ज्वल भविष्य की ढेर सारी कामनाओं के साथ।

तुम्हारा शुभेच्छु,
शोभन संवत्सर

प्राध्यापक,
राजकीय वरिष्ठ माध्यमिक विद्यालय,
सैक्टर–७, पंचकूला, हरियाणा।

✍ संवीक्षण

संकल्प का सार

● राम भाऊ साठे

हिन्दुओं में कोई भी मंगल कार्य करते समय प्रारम्भ में पुरोहित उस व्यक्ति से संकल्प कहलवाते हैं और बाद में वह कार्य प्रारम्भ होता है। संकल्प के तथा अन्य मन्त्र संस्कृत भाषा में रहते हैं। संस्कृत समझने वाले बहुत कम हैं यह ध्यान में रखकर कुछ लोगों ने संस्कृत मन्त्रों का आधुनिक भाषाओं में भाषांतर करके कहना प्रारम्भ किया है, किन्तु अधिकतर स्थानों में संस्कृत मन्त्र ही कहे जाते हैं।

मन्त्रों का अर्थ समझ में न आते हुए भी परिपाटी के कारण पुरोहित जैसे कहते हैं वैसे ही अनेक वर्षों से अधिकांश लोग करते आये हैं। मन्त्र कंठस्थ करके कहने का काम पुरोहित का है और पुरोहित के द्वारा विवाह, व्रतबन्ध, गृहप्रवेश आदि मंगल कार्यों के मन्त्र कहलवाकर वैसा करने से वह कार्य सम्पन्न होता है, ऐसी धारणा रहती है। अनेक पीढ़ियों से, अनेक सदियों से, या हजारों वर्षों से यह ही चलता आया है। यह पद्धति कब प्रारम्भ हुई कहना भी कठिन है। संकल्प मन्त्रों से सब कार्य प्रारम्भ होते हैं और अन्य मन्त्रों जैसा संकल्प मन्त्र का भी अर्थ न समझकर या उस पर ध्यान न देते हुए मंगल कार्यों की प्रक्रिया की जाती है।

संकल्प शब्द का अर्थ है निश्चय। संकल्प करना माने निश्चय करना, काम करने का निश्चय करना। जिसने जन्म लिया है वह काम करता ही रहता है — ***'न हि कश्चित्क्षणपि जातु तिष्ठत्यकर्मकृत्'***। कार्य अनेक प्रकार के होते हैं जिनके कारण अशाश्वत सुख प्राप्त होता है, किन्तु वह इन्द्रियों को सुख देते हैं। ऐसे अनेक कार्य मनुष्य करता है और ऐसे कार्यों में कुछ प्रतिकूल या बाधक बातें न आवें ऐसी इच्छा रखता है। जो विचारवान हैं वे शाश्वत सुख की इच्छा करते हैं और प्राप्त होने योग्य कार्य करते हैं। दोनों ही हेतुपूर्वक कार्य करते हैं। वह हेतु कभी वे मन में रखते हैं तो कभी बोलकर कह देते हैं। कार्य करने के विषय में मन में लिए गये इस हेतु के इस निश्चय को संकल्प कहते हैं। कोई भी मंगल कार्य प्रारम्भ करते समय हम लोग इसी संकल्प का अर्थात् हेतु निश्चय का, विधिपूर्वक उच्चारण करते हैं।

विवाह आदि मंगल कार्यों की समन्त्र विधि हिन्दू समाज में कब प्रारम्भ हुई और उसमें सबसे पहले समन्त्र संकल्प कहने की विधि कब जुड़ गयी, इसकी जानकारी नहीं है। यह हिन्दू समाज की सुसंस्कृत जीवन पद्धति है। ऐतिहासिक तथ्यों के आधार पर हिन्दू समाज का सुसंस्कृत जीवन अत्याधिक प्राचीन है। इसलिए यह विधि और उसके मन्त्र भी प्राचीन होंगे। संकल्प का मन्त्र भी प्राचीन होगा और आज वह पूरे हिन्दू समाज में व्याप्त

है। भारतवासी हिन्दू ही नहीं, दुनिया में कहीं भी बसा हुआ हिन्दू मंगल कार्यों के प्रारम्भ में संकल्प कहता है। कार्य करने का हेतु केवल मन में रखने के बदले उसका उच्चारण करने से उसको अधिक बल मिलता है और विधिपूर्वक उच्चारण करने से उस निश्चय को और अधिक बल प्राप्त होता है।

संकल्प विधिपूर्वक कहने की पद्धति किसने प्रारम्भ की यह ज्ञात नहीं है। संभव है कि उसने जब ऐसा संकल्प करने का प्रस्ताव रखा होगा यह कहना प्रारम्भ किया होगा तब *'यह अनावश्यक है'* ऐसा कहकर अनेकों ने इसकी उपेक्षा की होगी। फिर उपेक्षा और विरोध होने के पश्चात सर्वमान्यता प्राप्त हुई होगी। सर्वप्रथम किसी प्रतिभावान विद्वान या विद्वानों ने संकल्प की विधि और मन्त्र की योजना बनाई होगी और इसकी उपयोगिता जिनके ध्यान में आ गई ऐसे असंख्य लोगों ने पूरे समाज भर में अनेक वर्ष प्रचार करके सबके अन्त:करण में इसका स्थान निर्माण किया। आज केवल उनके परिश्रमों का परिणाम हमारे सामने है। यह पद्धति पूरे हिन्दू समाज में व्याप्त है और उनके मन में इसको पवित्र स्थान मिला हुआ है। हिन्दू समाज को एकात्म और एकराष्ट्र बनाने में उपयुक्त रही है।

संकल्प के पाँच अंग रहते हैं काल, स्थल, ग्रहस्थिति, हेतु और क्रिया। इनमें काल, स्थल और गृहस्थिति का संकल्प मन्त्र में जो वर्णन है वह हिन्दुओं की विशेषता है। कार्य करने का हेतु और क्रिया यह तो साधारण बात है किन्तु पहले तीन अंगों के वर्णन से पुरातन काल में हिन्दू समाज कितना प्रगत और सुविद्य था यह समझ में आता है। अब पाँचों अंगों का विचार करें।

काल संकीर्तन

इस अंग में याने काल संकीर्तन में वह व्यक्ति जो कार्य कर रहा है वह किस समय कर रहा है यह कहा जाता है। वर्तमान में हमारे देश में ईस्वी सन्, अंग्रेजी माह, उस माह का दिनांक, घंटे, मिनट, सेकंड इस प्रकार से समय की गिनती होती है। किन्तु यह हमारी हिन्दू देश की पद्धति नहीं है। डेढ़ सौ वर्षों तक ब्रिटिशों ने हमारे देश पर राज्य किया। उनकी दासता का वह हिन्दू समाज में उर्वरित लक्षण है। युधिष्ठिर संवत्, विक्रम संवत्, शालिवाहन शक, उनके भारतीय मास और तिथियाँ यह हमारी पद्धति है। किन्तु यह पद्धति भी परिमित काल गणना के लिए उपयुक्त है। दीर्घकाल की गणना के लिए वह उपयुक्त नहीं है। अनन्त काल का प्रारम्भ कब हुआ इसकी जानकारी तो किसी को भी नहीं है किन्तु बहुत दीर्घकाल की गणना हमारे संकल्पों में अवश्य की जाती है। जिस ख्रिस्ताब्द का प्रचार आज अधिकांश भारतीयों में व्याप्त है उसकी बीसवीं सदी शताब्दी के प्रारम्भ तक सृष्टि उत्पत्तिकाल के विषय मे क्रिश्चनों की धारणा थी कि ख्रि० पूर्व ४००४ में सृष्टि का निर्माण हुआ। यह धारणा पूर्णरूप से गलत है, यह बात बीसवीं शताब्दी के शास्त्रीय शोधों से स्पष्ट हुई। इतना ही नहीं, आज की पृथ्वी आदि सृष्टि का निर्माण का जो काल भारतीयों ने दिया है, जिसका वर्णन भारत भर के हमारे सभी पंचांगों

में किया जाता है और जो एक ही प्रकार से सर्वत्र किया जाता है, वह सही है यह भी अद्यतन शास्त्रीय शोधों से सिद्ध हुआ है।

संकल्प कहते समय हमारा काल संकीर्तन निम्न शब्दों से आरम्भ होता है। ***'श्रीमद्‌भगवतो महापुरुषस्य विष्णो राज्ञया प्रवर्तमानस्य वर्तमान ब्राह्मो द्वितीये परार्धे ..।'*** यहाँ पर ***वर्तमान ब्राह्मो द्वितीये परार्धे*** इन शब्दों का अर्थ आज के ब्रह्मा के, याने आज के सृष्टि के द्वितीय परार्ध में। इस सृष्टि के पहले अनेक सृष्टियां निर्माण होकर उनका विलय हो चुका है। उनकी पूरी जानकारी हमें नहीं है किन्तु हमारे प्राचीन ज्ञाताओं को आज की सृष्टि निर्माण की जानकारी थी। उनके अनुसार आज के ब्रह्मा का प्रथम अर्ध अर्थात् पचास वर्ष समाप्त हुआ है और द्वितीय (पर) अर्ध आरम्भ हुआ है। ***द्वितीय परार्धे*** के विषय में संकल्प में आगे ***श्वेतवाराह कल्पे वैवस्वत मन्वन्तरे ......'*** आदि वर्णन किया गया है। कल्प, मनु, महायुग आदि की संगणना का वर्णन हमारे पंचांगों में उपलब्ध है और भारत भर के सभी पंचांगों में इस काल गणना के विषय में एक ही विवरण है। वह है ४३,२०,००० वर्षों का एक महायुग होता है। ७१ महायुगों का मनु होता है और ऐसे १४ मनु से ब्रह्मा का एक दिन होता है। इस हिसाब से हमारे प्राचीन ज्ञाताओं के अनुसार ब्रह्मा के पचास वर्ष पूरे हो गये हैं और दूसरा परार्ध आरम्भ होकर चल रहा है। हिन्दुओं की काल गणना के अनुसार आज की सृष्टि का निर्माण मोटे हिसाब से २०० करोड़ वर्ष पूर्व हुआ था। आधुनिक शास्त्र भी सृष्टि निर्माण का यही काल बताते हैं। कई हजार वर्ष पूर्व हमारे ज्ञानी लोगों की कही बात योग्य है, सत्य है, ऐसा आज के शास्त्रज्ञों का भी कहना है। वर्तमान में ख्रि०सं० २०१० के १६ मार्च से हमारे संकल्प के अनुसार द्वितीय परार्ध के श्वेतवाराह कल्प के सातवें वैवस्वत मनु के २७ महायुग बीतकर अट्ठाइसवें महायुग के कलियुग का ५११२ वाँ वर्ष प्रारम्भ हुआ है। काल संकीर्तन में इतना बताकर आगे, समझने के लिए सरल परिमित काल गणना योग्य विक्रम संवत् और शालिवाहन शक के वर्ष नाम का उल्लेख किया जाता है।

स्थल संकीर्तन

इसमें किस स्थल पर या स्थान पर वह कार्य कर रहे हैं इसका वर्णन रहता है। इसमें भी हिन्दू समाज को हमारे ज्ञानी पूर्वजों द्वारा प्रदान की हुई सृष्टि के विस्तार की विशालता स्पष्ट होती है। मेरा घर, मेरा गाँव, मेरा प्रान्त, मेरा देश इतनी ही विशाल यह सृष्टि नहीं मानता। सृष्टिकी विशालता बताते हुये जिस सीन पर यह कार्य हो रहा है, उसका निर्देश सलि संर्कीर्तन में किया जाता है। सृष्टि की विशालता का वर्णन निम्न प्रकार है।

"महाजलौघमध्ये भ्रमणानां अनेक कोटिब्रह्माण्डानां एकतमे अस्मिन् महति ब्रह्माण्ड गोलके, सप्तपातालानां उपरिभागे सप्तलोकानां अधोभागे सप्तद्वीपयुक्ते नवखण्डमण्डिते, नव वर्षाणां मध्यस्थे, जम्बुद्वीपे भरतखण्डे ....."

इसका अर्थ अनन्त आकाश में अनेक आकाशगंगा हैं। प्रत्येक आकाशगंगा में अनेक सूर्य हैं और प्रत्येक सूर्य की अपनी अपनी ग्रहमाला है। हमारी पृथ्वी जिस सूर्य की परिक्रमा करती है, वह असंख्यों में एक सूर्यमाला है। उस सूर्यमाला में सप्त पातालों के ऊपर, सप्त लोकों के नीचे सात द्वीपों में से एक द्वीप में, नौ खण्डों में से एक खण्ड में नौ वर्षों में से एक भारतवर्ष में – ऐसी विशालता का वर्णन करते हुए फिर किस पर्वत या नदी के पास वह कार्य किया जा रहा है उसका निर्देश किया जाता है। इसमें व्यक्ति की दृष्टि और उसके विचार को अति विशाल बनाये रखने का प्रयास किया गया है। यह विशालता कपोल कल्पित नहीं है, बिल्कुल वास्तविक है। आजकल के शास्त्रज्ञों ने भी अनेक सूर्यमालाओं की स्थिति को मान लिया है। विस्तार से संकल्प कहते समय सप्तपाताल, सप्तलोक, सप्तद्वीप, नौखण्ड, नौवर्षों के नाम भी लिये जाते हैं।

ग्रह स्थिति संकीर्तन

निश्चित कार्य जिस समय किया जा रहा है उस समय चन्द्र, सूर्य तथा भिन्न ग्रहों की दृष्टि पृथ्वी आकाश में किस स्थान पर है इसका वर्णन इस संकीर्तन में रहता है। वह उसी दिन का नक्षत्र होता है। उस नक्षत्र का उच्चारण करने से पृथ्वी की स्थिति स्पष्ट होती है। बाद में कौन सा ग्रह कौन से नक्षत्र या राशि में है इसका वर्णन किया जाता है और उन ग्रहों की दृष्टि से पृथ्वी की स्थिति क्या है यह बताया जाता है। इस प्रकार सूर्यमाला में पृथ्वी की उस दिन उस समय की स्थिति स्पष्ट होती है।

हेतुसंकीर्तन और क्रियासंकीर्तन

हेतुसंकीर्तन में विशिष्ट कार्य के करने में मेरा उद्देश्य क्या है इसका स्पष्टीकरण किया जाता है, जैसे – मेरे या अन्यों के या सभी के सुख, शान्ति, पुष्टि, तुष्टि के लिए, आदि।

क्रियासंकीर्तन में हेतुसाधन के लिए कौन सी क्रिया की जा रही है उसका निर्देश रहता है।

यह है हिन्दुओं में कहे जाने वाले संकल्प का विवरण इसमें प्रत्येक व्यक्ति का मन हिन्दू पद्धति के अनुसार समाज धारणा योग्य बनाने का प्रयत्न किया है।

✍ जगत् विभूति

विक्रमादित्य की राजसभा के रत्न : वराहमिहिर

● लज्जा राम तोमर

अब से लगभग डेढ़ हजार वर्ष पूर्व भारतीय इतिहास के '*स्वर्णयुग*' गुप्तकाल में जब देश की जनता सब प्रकार से सुखी थी, बाह्य आक्रमणों से देश सुरक्षित था, तो देश में कला, साहित्य और विज्ञान के क्षेत्रों में अभूतपूर्व प्रगति हुई। यूनानी विद्वानों के साथ भारत का संपर्क हो जाने के कारण भारतीय और यूनानी विद्वानों के मध्य पारस्परिक विचार-विमर्श के फलस्वरूप भी भारतीय ज्ञान-विज्ञान की प्रगति को अधिक बल मिला। उस समय मध्य देश (वर्तमान मध्य प्रदेश) के अंतर्गत विद्या और ज्ञान के प्रमुख केन्द्र उज्जयिनी (वर्तमान उज्जैन) के निकटवर्ती कापित्थ नामक ग्राम में आदित्यदास नामक ब्राह्मण के घर में वराहमिहिर का जन्म हुआ था। वराहमिहिर की माता का नाम सत्यवती था। विक्रम विश्वविद्यालय उज्जैन के गणित संकाय के अध्यक्ष डॉ. घनश्याम पांडेय ने विभिन्न ऐतिहासिक ग्रन्थों के आधार पर अपने शोध पत्र में लिखा है कि यह निर्विवाद रूप से सिद्ध हो चुका है कि प्राचीन गणित एवं ज्योतिष के आचार्य वराहमिहिर ने उज्जैन से बीस किलोमीटर दूर स्थित कायथा ग्राम में स्थापित सूर्य के आशीर्वाद से गणित और ज्योतिष की शिक्षा प्राप्त की थी। डॉ. पांडेय के अनुसार महाकवि कालिदास द्वारा रचित '*ज्योतिर्विद*' अभिरंग में वर्णन के अनुसार वराहमिहिर सम्राट् चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य की सभा के नवरत्नों में से एक थे। कहा जाता है कि अधिक आयु हो जाने पर भी जब आदित्यदास के पुत्र उत्पन्न नहीं हुआ, तो उन्होंने सूर्यदेव की उपासना की। कुछ समय बाद आदित्यदास को पुत्र-प्राप्ति हुई तो उन्होंने उसका नाम मिहिर रखा। मिहिर शब्द का अर्थ होता है सूर्य। वराहमिहिर गुप्तकाल में भारत में ज्योतिर्विज्ञान के एक बहुत प्रसिद्ध विद्वान हुए।

वराहमिहिर का जन्म किस सन् में हुआ था, इस बात का निश्चिय पता अभी तक नहीं चल पाया है, किन्तु उनके ग्रन्थों से यह पता चला है कि वे कलियुगाब्द ३६०१, ईस्वी सन् ४९९ में अवश्य जीवित रहे होंगे। उनकी मृत्यु कलियुगाब्द ३६८९, ईस्वी सन् ४८७ में मानी जाती है। इस प्रकार उनके जन्म और मृत्यु का प्रामाणिक निर्णय हमें नहीं मिल पाया है। वे और आर्यभट्ट लगभग एक ही समय में हुए। आर्यभट्ट ने अपने ग्रंथ 'आर्यभट्टीय' की रचना कलियुगाब्द ३६०१, ईस्वी सन् ४९९ में की थी। वराहमिहिर को भद्रबाहु का भाई और जैन मानना सही नहीं है। वे शिव, विष्णु, सूर्य आदि देवताओं के उपासक थे।

उनका नाम वराहमिहिर किस प्रकार पड़ा, इस सम्बन्ध में एक दंतकथा प्रचलित

है। बड़ा होने पर मिहिर ने अपने पिता आदित्यदास से ज्योतिष का ज्ञान प्राप्त किया तथा इस विद्या का गहन अध्ययन किया। उनकी विद्वता से प्रभावित होकर राजा विक्रमादित्य ने उन्हें अपनी राजसभा का रत्न बनाया। राजा विक्रमादित्य के पुत्र-जन्म होने पर मिहिर ने भविष्यवाणी की कि अमुक वर्ष के अमुक दिन एक सूअर (शूकर) उनके पुत्र को मार डालेगा। राजा ने अपने पुत्र की सुरक्षा की बहुत अच्छी व्यवस्था की, पर अंत में मिहिर की भविष्यवाणी सत्य सिद्ध हो गयी। तब से मिहिर वराहमिहिर कहलाये। वराह का अर्थ है जंगल का सूअर। वे सूर्य के उपासक थे। ऐसा भी माना जाता है कि उन्हें सूर्य की कृपा से ज्योतिष-ज्ञान प्राप्त हुआ था। वे बड़े निर्भीक थे। इस सम्बन्ध में कई कहानियाँ प्रचलित हैं।

प्राचीन भारत के ज्योतिषियों में वराहमिहिर ही सबसे अधिक प्रसिद्ध हैं। कारण यह है कि उनके कुछ ग्रंथों का फलित-ज्योतिष-शास्त्री आज भी प्रयोग करते हैं। वराहमिहिर ने खगोल-विद्या एवं ज्योतिष शास्त्र पर जो ग्रंथ लिखे, उनसे उनके विशद एवं व्यापक ज्ञान का पता चलता है। उनका एक प्रसिद्ध ग्रंथ है 'पंच-सिद्धांतिका' अर्थात् पाँच सिद्धान्त। यह खगोल-विद्या और ज्योतिष विज्ञान का प्रामाणिक ग्रन्थ माना जाता है। इसके साथ ही यह गणित का संग्रहणीय गौरव ग्रन्थ है। इसकी प्रसिद्धि का श्रेय डॉ. थोबो तथा महामहोपाध्याय सुधाकर द्विवेदी को है। इस ग्रन्थ को उन्होंने तीन खंडों में विभक्त किया है। पहला खंड खगोल-विद्या पर है शेष दो खंडों में ज्योतिष-विज्ञान के सिद्धान्तों का वर्णन है। इस ग्रंथ का पहला खंड 'पंच सिद्धान्त' नाम से विख्यात है। इसमें वराहमिहिर ने अपने से पहले प्रचलित पाँच ज्योतिष-सिद्धान्तों पर प्रकाश डाला है। वे पुराने सिद्धान्त अब उपलब्ध नहीं हैं। इस ग्रंथ में वराहमिहिर ने विस्तारपूर्वक यह भी उल्लेख किया है कि खगोल-विद्या के अध्ययन के लिए किन-किन बातों का ज्ञान आवश्यक है। इसी कारण भारतीय ज्योतिष के इतिहास में वराहमिहिर के इस ग्रंथ का बहुत महत्व है। उन्होंने अपने इस ग्रंथ की रचना कलियुगाब्द ३६०७ (सन् ५०५) में की थी। अलबरूनी ने वराहमिहिर की बड़ी प्रशंसा की है।

उस समय ज्योतिष और गणित का ज्ञान एक ही ग्रंथ में दिया जाता था, परन्तु वराहमिहिर के ग्रंथ प्रमुखतया फलित-ज्योतिष से सम्बन्धित हैं।

वराहमिहिर ने अपना मत विशेष रूप से उस समय के सर्वाधिक विवादग्रस्त सिद्धान्तों पर प्रकट किया है। उन्होंने उल्लेख किया है कि पृथ्वी की आकृति गोल है, जिसके धरातल पर पहाड़, नदियां, पेड़-पौधे, नगर आदि फैले हुए हैं। यदि यमकोटि नगर विश्व के एक ओर स्थित है तथा उसके बिल्कुल दूसरी ओर रूम (रोम) नगर स्थित है, इसका यह अर्थ नहीं है कि एक नगर नीचा है और दूसरा ऊपर। पृथ्वी का धरातल चारों ओर एक-सा होने के कारण कोई स्थान ऊपर या नीचे नहीं कहा जा सकता।

वराहमिहिर के ग्रंथ के दूसरे भाग का नाम है — '*बृहद् जातक*'। इस भाग

अथवा ग्रंथ में वराहमिहिर ने ज्योतिष विज्ञान, विशेषत: यात्रा और विवाह-मुहूर्त, जन्म कुंडली आदि का वर्णन किया है। ग्रंथ का तीसरा खंड वराहमिहिर का सबसे प्रसिद्ध ग्रंथ है – *'बृहत् संहिता'*। इस ग्रंथ में चार हजार श्लोक हैं। इसमें केवल ज्योतिष के बारे में ही नहीं, अपितु अनेक विद्याओं का ज्ञान कराया गया है। इस ग्रंथ में हमें उसे समय के राज्यों, जनपदों, रीति-रिवाजों, विश्वासों आदि के विषय में पर्याप्त ज्ञान प्राप्त होता है। डेढ़ हजार वर्ष पूर्व के भारत का सही ज्ञान प्राप्त करने के लिए वराहमिहिर का यह ग्रंथ बड़ा सहायक और उपयोगी है।

श्री वेंकटेश्वर विश्वविद्यालय, तिरूपति के भू-विज्ञान के प्राध्यापक डॉ. ई.ए. व्ही. प्रसाद के अनुसार इस ग्रंथ में डेढ़ हजार वर्ष पूर्व जन्मे इस ऋषि ने जैव संकेतकों की एक सूची दी है। डॉ. प्रसाद के अनुसार 'बृहत् संहिता' प्राचीन भारत में कटिबंधीय भू-जल-विज्ञान के समस्त उपलब्ध ज्ञान का सार है।

वराहमिहिर द्वारा जैव संकेतकों की जो सूची दी गयी है, उसमें कोई ३० प्रजातियों के पौधे, आधा दर्जन प्राणी, जैसे कि आर्द्रताप्रिय पूड़ों का मेंढक तथा सूखेपन के प्रति संवेदनशील कीड़े, जो सदा गीलेपन की ओर आकर्षित होते रहते हैं, सम्मिलित हैं। चूंकि इन जैव संकेतकों को निरक्षर लोग तक पहचान सकते हैं और उन पर कोई खर्च भी नहीं आता, डॉ. प्रसाद इसे *'सूखे से संघर्ष की जनता-टेक्नालॉजी'* कहकर पुकारते हैं। किन्तु चूंकि वराहमिहिर ने यह ग्रंथ संस्कृत भाषा में लिखा है, किसी को यह विश्वास ही नहीं होता कि वह वैज्ञानिक भी हो सकता है। डॉ. प्रसाद के मत में वराहमिहिर की प्रविधि (तकनीक) से जलस्रोतों की खोज सरलता से हो सकती है और दीमक की बाँबियाँ भू-जल की सबसे बढ़िया संकेतक होती हैं। दीमक बहुत गहरे जाकर जल-पटल तक पहुंचते हैं और वहां से पानी लाते हैं ताकि बाँबियों में आर्द्रता बनी रहे, जो उनके जीवित रहने के लिए आवश्यक है। दूसरा निश्चित संकेत ऐसे वृक्ष होते हैं, जिनकी जड़ें ऐसी होती हैं जो जल-पटल से पानी खींच लाती हैं।

'बृहत् संहिता' ज्योतिष के संहिता विभाग की महत्वपूर्ण कृति है। इतिहासकार भी प्रमाणस्वरूप सादर इसका उल्लेख करते हैं। लगभग कलियुगाब्द ४९८६, ईस्वी सन् १८९४ में केर्न इसे प्रकाश में लाये और एशियाटिक सोसाइटी के जर्नल में इसका सम्पूर्ण अनुवाद प्रकाशित हुआ।

दसवीं शताब्दी ईसवी में भटोत्पल नामक एक विद्वान ज्योतिषि ने वराहमिहिर के अनेक ग्रंथों पर टीकाएं लिखीं। इसमें उनके ग्रंथों को और भी ख्याति प्राप्त हुई। वराहमिहिर के कुछ ग्रन्थों का अनुवाद अरबी भाषा में भी हुआ था।

वराहमिहिर उदार विचारों के ज्योतिषि थे। उन्होंने यूनानी ज्योतिष का भी अच्छा ज्ञान प्राप्त किया था। उनके ग्रंथों में यूनानी ज्योतिष शास्त्रियों का स्पष्ट प्रभाव दीख पड़ता है। उन्होंने अनेक स्थानों पर यूनानी ज्योतिष के पोलिस और रामाका सिद्धान्तों का उल्लेख किया है, अथवा जो उनसे मिलते-जुलते हैं। उन्होंने यूनानी ज्योतिष-विज्ञान की

बहुत प्रशंसा की है। उन्होंने लिखा है – "यूनानी लोग म्लेच्छ जाति के होते हुए भी आदर के योग्य हैं, क्योंकि उन्हें विज्ञान का अच्छा ज्ञान है और अनेक बातों में दूसरों से बहुत आगे हैं।" वराहमिहिर ने अपने ग्रंथों में अनेक यूनानी शब्दों को भी ग्रहण किया है। उन्होंने अपने अनेक सिद्धान्तों का उल्लेख करते हुए यूनानी विचारों का भी वर्णन किया है। उन्होंने यह मत व्यक्त किया था कि आकाश में ग्रहों और तारों की सही स्थितियों को खोजकर पंचांग को लगातार परिवर्तित करते रहना चाहिए।

खगोल-विद्या और ज्योतिष के साथ-साथ वराहमिहिर को कृषि-विज्ञान का भी पर्याप्त ज्ञान था। उन्होंने मिट्टी को उपजाऊ बनाने, खाद बनाने, फलों-फूलों की अधिक उपज पाने और उन्नत बीज उत्पन्न करने आदि की विधियों तथा पेड़-पौधों पर मौसम के पड़ने वाले प्रभावों का बहुत विशद वर्णन किया है। उन्होंने लिखा है – "बहुत अधिक तथा बहुत कम तापक्रम और सूखी हवाएँ पेड़ों में रोग पैदा कर देती हैं। फलस्वरूप पत्तियाँ पीली पड़ जाती हैं, कलियाँ मुरझा जाती हैं, पौधों की वृद्धि रुक जाती है और टहनियाँ सूख जाती हैं। इनके उपचार भी उन्होंने विस्तारपूर्वक बताये हैं। उनके मतानुसार, यदि सूखे जलवायु में भी पौधों की वृद्धि अच्छी हो, तो समझना चाहिए कि वहाँ भूमि के नीचे पर्याप्त मात्रा में जल है। उनके विचार से पौधों की स्थिति को देखकर अकाल अथवा वर्षा का अनुमान भी लगाया जा सकता है।

अध्यक्ष,
शिक्षा बचाओ आन्दोलन
सरस्वती बाल मन्दिर,
जी ब्लाक, नारायणा विहार,
नई दिल्ली–२८

राष्ट्र विभूति

हरियाणवी भाषा में महाराणा प्रताप

• रामशरण युयुत्सु

ज्येष्ठ शुक्ल, तृतीय, कलियुगाब्द ४६४२ (विक्रमी सम्वत् १५९७, ईस्वी सन् १५४०) को वर्तमान राजस्थान प्रांत के तत्कालीन मेवाड़ राज्य के राजकुमार के रूप में महाराणा प्रताप ने जन्म लिया। यह मुगल शासक अकबर के समकालीन थे। अकबर ने अनेक हिन्दू राजाओं को अपने अधीन किया, लेकिन महाराणा प्रताप ने स्वधर्म और स्वदेश की रक्षा के लिए अकबर की अधीनता स्वीकार नहीं की जिसके लिए उन्होंने अनेक विकट यातनाएं सहन की। वीर शिरोमणि महाराणा प्रताप की वीरता की गाथाएं भारतीय इतिहास का गौरवशाली अध्याय है। इनकी वीरता का यशोगान जन-जन में व्याप्त है। हरियाणवी रचनाओं में भी महाराणा प्रताप की गाथाएं लोक मानस में देश और धर्म की रक्षा के लिए उद्वेलन पैदा करती है।

सरस्वती (घग्गर) और दृषद्वती (चिटांग) की उपत्यका का प्रदेश हरियाणा अत्यन्त प्राचीन काल से भारतीय इतिहास का केन्द्र स्थल रहा है। इस भूमि ने जहाँ महाभारत जैसे महायुद्धों को झेला है, वहीं वीर भूमि कहलाने के साथ ही इसने वीरों का खुले दिल से सम्मान भी किया है। हरियाणवी को अनेक नामों से अभिहित किया गया है, जिनमें बांगरू, खड़ी बोली, हरियाणवी, जाटू, कौरवी और दक्षिणी हिन्दी प्रमुख हैं। हरियाणा की लक्ष-लक्ष जनता के हृदयों में राष्ट्र वीरों की अनेक अमर गाथायें अंकित हैं। भारतवर्ष में लम्बे समय तक इतिहास परम्परा कर्णश्रुति के आधार पर रही है। आल्हा, सांग तथा नौटंकी (नाटक) के माध्यम से वीरों का यशोगान भरपूर उमंग तथा उल्लास से प्रस्तुत किया जाता रहा है।

किसी भी प्रदेश के लोकनाट्य वहाँ तथा आस-पास की क्षेत्रों को संस्कृति के मुँह बोलते चित्र कहे जा सकते हैं, क्योंकि इनमें उस भू-भाग के मौलिक आदर्श एवं जीवन मूल्यों को अभिनय द्वारा प्रदर्शित किया जाता है। लोकनाट्य भी लोक साहित्य की एक सशक्त विधा है। 'सांग' हरियाणा की नाट्य-परम्परा का सिरमौर है, जिसे यहाँ का कौमी नाटक भी कहा गया है। हरियाणा की जनरंजनकारी यह विधा वस्तुत: गीत-संगीत एवं नृत्य की एक मनमोहक त्रिवेणी है। जिसमें सर्वाधिक मजेदार है – इसके गीतों की गमक। गीत हरियाणवी सांगों के प्राण होते हैं। सांग में यह रागिनी का जादू ही है जो सिर चढ़कर बोलता है। सांगों में लोकप्रिय कथानकों के गीतों व अभिनय के माध्यम से प्रस्तुत किया जाता है।

इन सांगों में जनता का अनुमोदन पाने वाले वन पर्व, चीर पर्व, विराट पर्व, उत्तानपाद, राजा हरिश्चन्द्र (सभी सरूप चन्द), नल-दमयन्ती, पूरन भगत (लखमीचन्द), राजा नल (प्रह्लाद शर्मा गौड़), हकीकतराय, रूप बसंत (मांगेराम) विशेष उल्लेखनीय है। इनके अतिरिक्त राणा प्रताप, राजा रिसाल, अमर सिंह राठौर पद्मावत तथा हरफूल जाट जूलाणीवाला सांग भी हरियाणा में प्रसिद्धि प्राप्त कर चुके हैं।

हरियाणा के प्रसिद्ध सांगी पंडित मांगेराम (पाणची निवासी), पं. लखमी चन्द के शिष्य एवं समकालीन ही थे। इन्होंने लगभग चालीस सांग लिखे और स्वयं मंचित किए हैं। परन्तु उस समय तक प्रकाशन की सुविधा तथा प्रचलन नहीं होने से मूल प्रारूप प्राप्त नहीं हो पाया है। वीररस के सांगों में इनका सांग 'चित्तौड़गढ़ का केहरी' विशेष उल्लेखनीय सूची में रहा है। प्राप्त जानकारी के अनुसार पलवल निवासी डा. सरला चौधरी ने 'महाराणा का महत्त्व : काव्य शिल्प' नामक शोध-प्रबन्ध का सर्जन किया है। यह आलेख लिखने तक मैं (लेखक) इस ग्रन्थ की मूल प्रति प्राप्त नहीं कर पाया था। जब तक हरियाणा की वीर परंपरा अक्षुण्ण है, तब तक सांग की लोकप्रियता भी अक्षुण्ण रहेगी। हरियाणा का लोकनाट्य सांग, संगीत, स्वांग, अथवा नौटंकी केवल हरियाणा ही नहीं अपितु उत्तर प्रदेश के सभी पर्वतीय क्षेत्रों में इसी नाम से प्रचलित हैं।

हरियाणा की लोक-गाथाओं की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि ये हमारे सामने राष्ट्रीय संस्कृति का अनूठा चित्रण प्रस्तुत करती हैं। इनमें घटनाओं का सहज एवं गतिशील चित्रण होता ही है, इसके साथ ही इनमें यथार्थ जीवन भी रूपायित हो उठता है तथा इतिहास सजीव हो उठता है।

हरियाणा की लोक गाथाओं के लेखन को अनेक वर्गों में विभाजित किया जा सकता है, परन्तु प्रायः मुख्यतः इन लोक कथाओं को प्रवृति एवं प्रतिपाद्य की दृष्टि से तीन प्रमुख वर्गों में विभाजित किया जा सकता है — १. प्रेम गाथाएँ, २. वीर गाथाएँ, ३. अलौलिक गाथाएँ। मुगल साम्राज्य की स्थापना के बाद भी उत्तरी भारत में स्वदेश और स्वधर्म अस्मिता की रक्षा में कतिपय नरेशों ने किसी भी मुगल शासक को अपना शासक या सम्राट नहीं माना। चित्तौड़ नरेश भारत माता के उन्हीं यशस्वी महापुरुषों में हैं, जिन्होंने भारत के इतिहास में अपना नाम अमिट अक्षरों में अंकित कर दिया है।

रोहतक निवासी भारत भूषण सांघीवाल हरियाणा के प्रबुद्ध कवि हैं, जिन्होंने हरियाणवी में अनेक रचनाएँ प्रस्तुत की हैं। उन्होंने अपनी संवेदना को पौराणिक और लौकिक कथाओं के माध्यम से व्यक्त किया है। हरियाणवी में रचित 'महाराणा प्रताप' उनकी उत्कर्ष रचना है।

महाराणा प्रताप की वीरता का वर्णन कवि सांघीवाल ने शीतल भाट के माध्यम से प्रभावी ढंग से किया है —

...........पगड़ी सै महाराणा की

वीर बहादुर मरदानां की ....
वीर तो बांका छैल निराला
शीश नां कभी झुकावण आला।
भाला जिसका चमकदार सै,
उसका हौवे अचूक वार सै।
नहीं किसी तैं मानी हार
नां बट्टा लाऊँगा ......

युद्ध भूमि का वर्णन भी कविवर सांघीवाल ने बहुत ही मार्मिक ढंग से किया है —

...... चेतक पै सवार राणा, लाहरे थे लाशां के ढेर
काट-काट शाही सेना गाजर मूली जयूं दी गेर
खून की बहैं थी नदी आगे बढ़ता जा रहा था शेर

भामाशाह के राष्ट्र प्रेम और उसके द्वारा प्रकट किए गए उद्‌गार पर कवि ने प्रेरणादायक रचना दी है —

...... देश धर्म की रक्षा खातिर, दिया टूट कै दान तनैं,
मेवाड़ की रख दी लाली, आन-बान और शान तनैं।
ना उम्मीद हम होंगे थे भाई, नई फूंक दी जान तनै,
भौत-भौत धन्यवाद वीर रै, खुश राखै भगवान तनै।।

जीन्द जिला मुख्यालय के निकटवर्ती कस्बा जुलाना निवासी प्रतिष्ठित हरियाणवी कवि श्री ओम् प्रकाश चौहान ने महान देशभक्त महाराणा प्रताप का इतिहास हरियाणवी सांग के रूप में प्रस्तुत किया है। यह सांग कई कसौटियों को पार कर आकाशवाणी के रोहतक केन्द्र से प्रसारित भी हो चुका है।

सांग का प्रस्तुतिकरण का मंतव्य महाराणा प्रताप के आदर्श चरित्र द्वारा पाठकों व श्रोताओं में मातृभूमि व कर्त्तव्य के प्रति श्रद्धा व बलिदान का भाव जगाना है। महाराणा प्रताप की प्रतिज्ञा का विवरण कवि ने इस प्रकार किया है —

..... महल छोड़ कै रहूं झोपड़ी में, जंगल में डेरा लाऊँ,
सोने चान्दी के बर्तन तज, पत्तल पै भोजन खाऊँ।
मखमल का बिस्तर त्यागूं, मैं धरती पै सो सुख पाऊँ,
तज दयूंगा पोशाक, मिठाई, दाढ़ी तक नां बणवाऊँ।
उस दिन मैं गंगा न्हाऊँ, यो पूरा हो जो प्रण कहूँ .....

चेतक घोड़े के पराक्रम को भी कवि ओम् प्रकाश चौहान ने बहुत ही मनोयोग से प्रस्तुत किया है।

..... उड़ै होय्या गजब संग्राम, राम की सोंह
करया चेतक ने बड़ा काम, राम की सोंह

बिजली का टूक बणग्या, राणा का चेतक
जोश और उमंग में भर कै, हाण्डै था दौड़ा-दौड़ा
दुनियां में सरहाया गया, सेवक और स्वामी का जोड़ा
होय्या अमर दोनवां का नाम, राम की सोंह.....

महाराणा प्रताप के अंतिम समय प्राण त्यागने के क्षणों में अपनी इच्छा और प्रतिज्ञा को अपने बेटे अमरसिंह को याद दिलाने का वर्णन भी कवि चौहान ने सुन्दर व मार्मिक ढंग से किया है –

...अक्ल ठिकाणै लाणी थी
मनैं उस इज्जत के झाड़ की
इस काण मने प्रण करया
और राह पकड़ी राड़ की
बिना चित्तौड़ अधूरी रहगी,
आजादी मेवाड़ की ....
हां, गाड दी फूट ने कील कफन में रै ....

कनीनाखास (महेन्द्रगढ़) निवासी आग्नेय कवि डा. सारस्वत मोहन 'मनीषी' की लेखनी ने 'एक हकीकत और' नामक अनूठे खण्डकाव्य को सृजित किया है। कथानक के अनुसार राष्ट्रभक्ति के पर्याय महाराणा प्रताप अपने तेजस्वी जीवन में एक मानसिक तनाव के ग्रहण से ग्रस्त हो गए थे। भोजन-छाजन की कोई व्यवस्था न होने से पत्नी और संतति के साथ वन-वन में इधर-उधर विचरते रहे। जंगली बिलाव द्वारा बच्चों के हाथ से रोटी छीन ले जाने की घटना से महाराणा का साहस टूट गया और हतोत्साहित हो कर प्रताप ने संधि-पत्र लिखने का विचार किया ही था कि इस खण्ड काव्य के नायक मात्र आठ वर्षीय भील बालक दूला ने अपने राजा के वंश (महाराणा प्रताप के बच्चों) को जीवित रखने की भावना से महाराणा प्रताप के विवेक को पुन: जागृत कर दिया।

भील बालक दूला ने अपने अप्रितम बलिदान से महाराणा प्रताप को नई ऊर्जा, नई प्रेरणा और नई दृष्टि प्रदान की। यह खण्ड काव्य एक ऐसी बलिदानी परम्परा का स्मरण करवाता है, जो देश और धर्म के लिए हंसते-हंसते प्राणों का उत्सर्ग करने में जीवन की सार्थकता समझते हैं–

इच्छा और अनिच्छा में भारी अन्तर होता है,
बल प्रयोग से तन-मन लोहू के आंसू रोता है।
नन्हीं लहर अगर सागर से दागी हो जाती है,
छोटी सी चिंगारी भी फिर बागी हो जाती है।

यह खण्ड-काव्य जीवन, जागृति, बल और बलिदान की प्रेरक भावना से भरा

पड़ा है। खण्ड काव्य में दर्शाया गया है कि भील बालक के परिवार में उसके अतिरिक्त उसकी बूढ़ी और विधवा मां ही थी। गरीबी की यह सीमा थी कि वह बालक ही दोनों के पेट के भरण-पोषण हेतु जंगल से लकड़ी काटकर लाता और उन्हें बेचकर अपना तथा अपनी मां का पेट भर पाता। राणा प्रताप के बच्चों को भूखा देखकर उसके मन में देश सेवा के भाव जागृत हो गये। उसने अपने हिस्से की रोटी बच्चों को देनी प्रारंभ कर दी। इसी प्रक्रिया के चलते कुछ दिन बीते थे कि अकबर के सैनिकों ने उसका पीछा किया और राणा प्रताप के परिवार और उसके शिविर (आवास) की जानकारी उससे जाननी चाही। राष्ट्र भक्त भील बालक दूला ने अपनी दोनों बाहें कटवा लीं, परन्तु राणा प्रताप के बारे में कुछ नहीं बताया। दोनों बाहें काट दिए जाने के बाद भी मौका पाकर रोटी से भरे थैले को अपने मुंह में लटका कर वह अपने राणा के बच्चों की भूख निवारण करने के लिए दौड़ पड़ा।

दोनों बाहें गंवाकर दूला इतना सिखा गया था
मेवाड़ी माटी कैसी है, यह भी दिखा गया था
झुका दबाकर दांतों में थैली ले उठा भागा था
राजा को रोटी पहुंचानी यह विवेक जागा था

पर्वत भी फट जाता तो इतिहास कहां रच पाता
राणा के क्रोधानल से अकबर कैसे झुलस जाता
सिर्फ गुलाबी रह जाती, बलिदान वेग थम जाता
राष्ट्र धमनियों में दौड़ा था, वह प्रताप जम जाता

कलमवीर मोहन 'मनीषी' ने इस खण्ड काव्य के अतिरिक्त महाराणा प्रताप को लेकर कई रचनाओं का सृजन किया है। उनमें उनकी कविताएं ***भामाशाह*** तथा ***प्रतिज्ञा*** विशेष उल्लेखनीय हैं —

...... सोने-चांदी की थाली क्या, हीरे-पन्ने की प्याली क्या
जब तक ना पूर्ण प्रतिज्ञा हो सुविधा की पूर्ण अवज्ञा हो।
तब तक धरती पर सोऊँगा, स्वातन्त्रय बीज मैं बोऊँगा,
पत्तों पर भोजन कर लूंगा, रूखी-सूखी से भर लूंगा।

(प्रतिज्ञा, आग के अक्षर)

पतझड़ का सिंहासन होता बाकी बची बहार ना होती
भामाशाह नहीं होते तो राणा की तलवार न होती

ग्रह-नक्षत्र सभी टेढ़े थे सीधी यह रफ्तार न होती
अगर पेट भूखा रहता तो गर्म लहू की धार न होती

धन निर्धन को शक्ति दे गया वर्ना फिर ललकार न होती
भामाशाह, नहीं होते तो ....

(भामाशाह, आर पार हो जाने दो)

वीररस से ओतप्रोत हरियाणा के सांगों के भजन व रागनियों के अतिरिक्त यहां आल्हा गायन का भी अपना एक विशेष स्थान है। इसका एक अकेला गायक भी एक हाथ में खंजरी, चिमटा, इकतारा अथवा करताल (खड़ताल) जो भी उपलब्ध हो बजाकर झूमझूम कर गाता है। उसके ओजस्वी वीर रस के गायन को सुनकर कमजोर से कमजोर व्यक्ति में भी रक्त का संचार हो करके खून में उबाल आ जाता है।

बचपन में अपने पैतृक गांव रोझला (जीन्द) में बतर्ज आल्हा के गायन में मांडलगढ़ की लड़ाई, महौबगढ़ की लड़ाई, चित्तौड़गढ़ की लड़ाई को अपने पिता श्री धनराम पांचाल को एक हाथ में एकतारा और दूसरे हाथ में करताल लेकर सामने रखी पुस्तक से गाते हुए देखा व सुना है। उनकी स्मृति को जीवित रखने में सहायक एक यह गायन भी है। उनके द्वारा गायी कुछ पंक्तियां आज भी मन-मस्तिष्क में घूम रही हैं, जो इस प्रकार थी –

भीषण हुई लड़ाई हल्दी घाटी, दुश्मन को लिया था घेर
राणा प्रताप का घोड़ा दौड़ा, चेतक भाग्या चार चुफेर
मेवाड़ की धरती गरजी, मुगल फौज का कांपा शरीर
राणा जी का भाला घूमा, अकबर सेना होण लाग्गी ढेर

इतिहास दीपक है अंधेरों को दूर भगाने हेतू,
पूर्व वर्तमान के लोगों को मिलाने का सेतु।
सही-सही इतिवृत्तों को हम जाने व पहचानें,
यह हमारे मानस को है राह दिखाता केतु।। (अज्ञात)

इसी मनोभावना के अन्तर्गत जिला पानीपत के गांव आट्टा निवासी श्री राजेशार्य 'रत्नेश' ने महाराणा प्रताप की गौरव गाथा को एक लघु पुस्तक 'स्वाभिमान का प्रतीक : मेवाड़' नाम से प्रस्तुत किया है। शान्तिधर्म प्रकाशन जीन्द की यह कृति इतिहास की थाती बन गई है। गुरुकुल कुरूक्षेत्र में अध्यापन एवं स्वतंत्र लेखन को समर्पित राजेशार्य 'आट्टा' ने इतिहास की खोज और देश के वास्तविक स्वरूप का चिन्तन करके इस लघु पुस्तक का सृजन किया है।

हरियाणा के उत्तर-पूर्वी भाग में थानेसर (स्थाणेश्वर) खण्ड के कथित कवियों को सर्वाधिक ख्याति मिली थी। श्री अहमद्‌बख्स (थानेसरी) की उनकी सांग श्रृंखला इस प्रकार है – रामायण, जयमल-फत्ता, गूगा, चौहान (पृथ्वीराज चौहान), सोरठ, चन्द्र-किरण, नवलदे और कंस लीला। 'मुसलमान होते हुए भी हिन्दू धर्म शास्त्रों,

देवताओं और राजाओं में अहमद की श्रद्धा और उसका ज्ञान अपूर्व और गौरव की वस्तु है।' चित्तौड़ और महाराणा प्रताप पर भी उसने अलग से कई रचनाएँ की हैं –

मेरी टेक दीन की राखियो सतपतगत में संग
अष्ट देव गणपति प्रथम कहूँ रजपति जंग
जिन्हों के शीश घड़ों का है झलका
मुठभेड़ शर राठोरों का चौगत्ते अकबर दल का
चित्तौड़ टूट विध्वंस हुई कहूं कारण मुगलों के छल का

हरियाणा में सर्जित खण्डकाव्य, काव्य संग्रह, सांग (सर्जन एवं मंचन) इतिहास लेखन के अतिरिक्त अनेकों लोगों ने महाराणा प्रताप के कथानक पर ऑडियो–विडीयो कैसेट तथा सी.डी. का निर्माण भी किया है। यह कैसेट तथा सी.डी. सामान्य जन के मनोरंजन के साथ इतिहास ज्ञान का साधन बन रही है। काव्य सर्जक तथा समाजोपदेशक के रूप में भी अनेकों लोगों ने काव्य सर्जन किया है। इतिहास को जीवित और सक्रिय रखने में इन लोगों का भी विशेष योगदान है। इन विद्वानों में स्वामी भीष्म जी घरौण्डा, पिरथी (पृथ्वी) सिंह बेधड़क, शोभाराम 'प्रेमी', रामपाल आर्य, विप्र घनश्याम तथा राजेश कौशिक गांव शामदो के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं।

आर्य समाज के भजनोपदेशक एवं विद्वान स्वामी भीष्म जी के पचासों भजन महाराणा प्रताप के कथानक पर आधारित हैं। इनकी मूल प्रतियां हरियाणा के कस्बा घरौण्डा में स्थित भीष्म आश्रम में जीर्ण–शीर्ण अवस्था में उपलब्ध हैं। बानगी के रूप में उनके कुछ भजनों की कुछ पंक्तियां प्रस्तुत हैं –

उतारी है पगड़ी मैंने सिर ऊपर तैं जाण कैं
धब्बा नां लाग जावे कहीं महाराणा की शान पै
..... पर पगड़ी नां झुकेगी ये सामने सुल्तान कै ....

पिरथी सिंह 'बेधड़क' के भजनों को भी सामान्यत: उनके संग्रहों तथा कैसेटों के माध्यम से बहुतायत में सुना जा सकता है –

वीरों की धरती दु:ख पा रही रै चित्तौड़।
वीर बहादुर मर जाते पर मरती नहीं मरोड़।।

आज से हम सब नैं ठानी विराणी जिन्दगी अपनी
हमें तो देश सेवा में लगानी जिन्दगी अपनी
जोहड़ का पी पी कर पाणी बितानी जिन्दगी अपनी
वतन की खातिर बलवानी लगानी जिन्दगी अपनी
फतेह होगी बनें राजा, मरें तो स्वर्ग को जाएं
यही पृथ्वी सिंह ने मानी है फानी जिन्दगी अपनी

स्वामी भीष्म जी की टेक में गाई गयी शोभा राम 'प्रेमी' के नाम से भी कई रचनाएँ (भजन) उपलब्ध हुए हैं —

ऐसा अनुचित शब्द मानसिंह कहणा ठीक नहीं
शेरों का पिंजरै में बस कै रहणा ठीक नहीं
अपणे कुल कै मान सिंह नहीं धब्बा लाण चाहिए
जिस माता का दूध पिया, नहीं उसे लजाणा चाहिए
आण बाण और शान के ऊपर खुद मिट जाणा चाहिए
पर गैर धर्म के राजा को नां शीश झुकाणा चाहिए
आजादी के बन्धन के मांह दु:ख सहणा ठीक नहीं

सच्चे वीर भूलते नां जो परण ठहरां ले मन में
चाहे प्राण जावैं जिस्म तैं, नां हटै, जा डटै रण में
एक मिनट नहीं रह सकते हैं सूरवीर बन्धन में
आराम मिले चाहे कष्ट पड़े चाहे टोटा भी हो धन में
जो तन को दु:ख देता हो वह गहणा ठीक नहीं

अकबर की पोशाकों से मेरी फटी लंगोटी आच्छी
स्वामी भीष्म को त्याग लोभ में बहणा ठीक नहीं

भाई देश धर्म के लिए हुई या पैदा खोड़ मेरी
बहुत दिनों से टेर रही प्यारी चित्तौड़ मेरी
आजाद करूं चित्तौड़ प्रतिज्ञाएं होगी सिरमौर मेरी
मिलूंगा तेग से अकबर से हो दिल्ली दौड़ मेरी
शोभा राम स्वतंत्र भवन का ढहणा ठीक नहीं।

पृथ्वी सिंह 'बेधड़क' की टेक में ही शोभा राम 'प्रेमी' का यह भजन भी पठनीय है। महाराणा प्रताप के एक बार हार जाने के बाद तथा भामाशाह द्वारा धन जुटाने के बाद महाराणा प्रताप द्वारा पुन: अपने सैनिकों को संगठित करने का प्रयास व उद्‌बोधन इस भजन में दर्शाया गया है—

हमें कहने वाले नां चाहते, कुछ करने वाले चाहते हैं
देश धर्म जाति के ऊपर मरने वाले चाहते हैं
नहीं मौत और आपत्ति से मरने वाले चाहते हैं
हमें वीर चाहिए भूखे रहकर वर्षों तक लड़ने वाले
हमें वीर चाहिए लाखों आगे एकल्ले ही अड़ने वाले

हमें वीर चाहिए दुश्मन ऊपर बिजली बन पड़ने वाले
हमें वीर चाहिए नंगे पैरों पहाड़ों पर चढ़ने वाले

नव लेखन में प्रयासरत नवयुवक गांव शामदो (जीन्द) निवासी राजेश कौशिक की भी कई रचनाएं भजनों के रूप में पढ़ने व सुनने में आई हैं –

बत्तीस किले जीत लिए पर दो की रहगी मन में
दुश्मन ऊपर टूट पडू, पर जोर रहा नां तन में
बेसक जान चली जा बेटा, पीठ दिखाइए नां रण में
काल बण कै टूट पड़िए कदै बट्टा ला दे घर में

जिस भूमि नै जन्म दिया, उसका कर्ज चुकाणा था
मां की लाज राख ली उसनैं, वो मेवाड़ का राणा था
सब कुछ त्याग दिया था उसनैं, जंगल के मां रहणा था
राजेश कौशिक शामदो आला मन तै सत्कार करै सै

विप्र घनश्याम की कुछ रचनाएँ भी इधर–उधर सुनने को मिली हैं। बानगी देखिए –

खाऊँ नां परतन्त्रता की स्वर्ण की भी थालियों में
भले हैं स्वतंत्रता के दोने पात ढाक के
चाहता नहीं हूँ स्वर्गलोक की भी बादशाही
बदले में मातृभूमि मुट्ठी भर खाक के
मुझ पै लंगोटी फटी धोती रहै राणी पै
रोती रहे राजकन्या चाहे टूक भर रोटी को
हाथ में कृपाण जूएं लूं गात में हैं प्राण जूँ जूँ

अन्त में मुझे तो बस यही कहना है –

मुझे न जाना गंगा सागर, मुझे न रामेश्वर काशी
तीर्थराज चित्तौड़ देखने को मेरी आँखें प्यासी
नहीं जा रहा पूजा करने लेने सतियों की पद धूल
वहीं हमारा दीप जलेगा, वहीं चढ़ेंगे माला फूल।

आधार पुस्तकें, पत्रिकाएं व अन्य सामग्री :–

१. हरियाणा सांस्कृतिक दिग्दर्शन, लोक सम्पर्क एवं सांस्कृतिक कार्य हरियाणा, चण्डीगढ़, १९७८
२. डॉ. शंकरलाल यादव, हरियाण प्रदेश का लोक साहित्य, हिन्दुस्तानी एकेडमी, इलाहाबाद
३. डॉ. सारस्वत मोहन 'मनीषी', एक हकीकत और, किताबघर नयी दिल्ली
४. डॉ. रामपत यादव, भारत भूषण सांघीवाल : हरियाणवी काव्य ग्रंथावली, सुकीर्ति प्रकाशन, कैथल (हरि०)
५. ओम् प्रकाश चौहान, मेवाड़ का शेर : महाराणा प्रताप, दीप प्रकाशन, जीन्द (हरि०)
६. राजेशार्य 'आट्टा', स्वाभिमान का प्रतीक : मेवाड़, शान्ति धर्मी प्रकाशन, जीन्द (हरि०)
७. सप्तसिन्धु, अक्टू–नव. १९६८, भाषा विभाग हरियाणा, चण्डीगढ़

८. डॉ. पूर्णचन्द शर्मा : पण्डित लख्मी चन्द ग्रंथावली, हरियाणा साहित्य अकादमी, पंचकूला (हरि०)
९. देवी शंकर प्रभाकर, हरियाणवी लोक—नाट्य, सप्तसिन्धु मासिक, चण्डीगढ़, वर्ष—१५ अंक १०—११
१०. सत्यपाल गुप्त एम.ए., हरियाणा में रचित हिन्दी साहित्य, १९६९
हरियाणा प्रादेशिक हिन्दी साहित्य सम्मेलन, भिवानी (हरि०)
११. सत्यपाल गुप्त, हरियाणा में रचित हिन्दी साहित्य, १९७८, भाषा विभाग हरियाणा, चण्डीगढ़
१२. डा. बीजेन्द्र कुमार 'जैमिनी', हरियाणा साहित्यकार कोश, माण्डवी प्रकाशन, गाजियाबाद (उ.प्र.)
१३. रामपाल आर्य, देशभक्त वीर : महाराणा प्रताप (ऑडियो कैसेट) ऋषि रेडियोज़, रोहतक (हरि०)

अंगिरा शोध संस्थान,
जींद, हरियाणा

A School with a Difference

D.A.V. PUBLIC SCHOOL HAMIRPUR (H.P)

'An Institution for Academic Axcellence'

- Highest number of selections in competitions for MEDICAL, ENGINEERING, NDA and NTSE.
- Track record of Good/Very good results as per DAV CMC result analysis for the last 13 years.
- Declared Best School of the region by the print media.
- 1St in State CBSE, AISSE - 2005.
- 1St in State Engineering - AIEEE-2006 and 2007
- 1St in HP-PMT - 2007
- 1St in State NTSE - 2007 where 2 students out of total 5 from whole Himachal are from this school.
- 1St in North Zone IIT (All India 17th Rank) 3 students selected in IIT - 2009.
- Conferred the best school award by 'Himachal Kesari' (A leading newspaper) on 30th January 2009 for its outstanding and exemplary contribution in the field of education.

मुसलमानों से संवाद रचना के नये प्रयास

● डॉ. कुलदीप अग्निहोत्री

भारत का मुसलमानों से वास्ता हजरत मोहम्मद की मृत्यु के कुछ समय बाद ही पड़ना शुरू हो गया था। अरबों का भारत पर पहला आक्रमण कलियुगाब्द ३७३८-३९ (सन् ६३६-३७) में हुआ। कलियुगाब्द ३८१४ (सन् ७१२) में सिंध पर मोहम्मद बिन कासिम के आक्रमण को आंशिक सफलता प्राप्त हुई। ऐसा नहीं है कि उन जातियों और देशों से भारत के इस्लाम से पूर्व संबंध नहीं थे। अरबों, तुर्को , ईरानियों, अफगानों और मध्य एशियाई देशों के भारत से संबंध इस्लाम पूर्व ही थे। सागर के रास्ते अरबों का और भारतीयों का संबंध व्यवहार बना ही था। परन्तु छठी शताब्दी में जब अरब में इस्लाम का आविर्भाव हुआ तो अरबों ने इस्लाम मत ग्रहण भी किया और अपने पड़ोसी देशों को जीत कर उन्हें बल पूर्वक ग्रहण भी कराया। इसी प्रक्रिया में भारत का इस्लाम से सामना हुआ। भारत और इस्लाम पंथियों का इस्लाम के इतिहास में सबसे लम्बा संघर्ष विद्यमान है। परन्तु यह भी एक अजीब सच्चाई है कि भारत में आने से पूर्व और उसके पश्चात् भी इस्लामी सेनाएं चाहे वे अरबी हों, चाहे तुर्की, चाहे अफगानी, चाहे तातारी, वे जिस देश में भी गई, अल्पकाल में ही उसकी पहचान और राष्ट्रीयता को समाप्त करके उसे इस्लामी पहचान दी। देश के लोगों को पुरानी विरासत से तोड़ने में सफलता पाई और यहां तक की यह स्थिति पैदा कर दी कि उस देश के लोग अपने इस्लाम पूर्व पूर्वजों, इतिहास और विरासत को नकारने ही नहीं लगे बल्कि उस पर शर्मिन्दगी भी महसूस करने लगे। लेकिन भारत पर जब इन इस्लामी सेनाओं ने आक्रमण किये तो शस्त्र और शास्त्र दोनों स्तरों पर ही द्वंद हुआ परन्तु जब एक बड़े भू-भाग में मुसलमान राजाओं ने अपना राज्य स्थापित कर लिया और उन्हें यह भी अनुभव होने लगा कि यूरोप, अफ्रीका और एशिया के अन्य देशों की तरह भारत को इस्लामी देश नही बनाया जा सकता तो ऐसी स्थिति में दोनों पक्षों ने संवाद की आवश्यकता अनुभव की होगी। यहां एक और तथ्य भी ध्यान में रखना होगा कि जो लोग यह दावा करते हैं कि अपने लगभग एक हजार साल के शासन काल में भी मुसलमान राजा इस देश की सनातन परम्परा, इतिहास और धर्म को क्षति नहीं पहुंचा सके, वह भूल जाते हैं कि मुसलमान शासकों ने देश के एक अच्छे खासे भू-भाग में रहने वाली जनसंख्या को साम दाम दण्ड भेद से मुसलमान बना लिया और वहां के लोगों को देश के सनातन प्रवाह से विलग कर वहां एक नई राष्ट्रीयता और नई पहचान आरोपित कर दी। सिंध, बंगलादेश, ब्लोचिस्तान, सीमान्त प्रान्त और पश्चिमी पंजाब इसके उदाहरण हैं।

हिन्दू-मुस्लिम संवाद के प्रारंभिक दौर में एक ऐसा पड़ाव आता है जिसकी अवहेलना नहीं की जा सकती। यह दौर या पड़ाव सूफी संप्रदाय के नाम से जाना जाता है। भारत वर्ष में सूफियों के गली मुहल्लों को जाने बिना हिन्दू-मुस्लिम संवाद (चाहे वह किसी भी स्तर का हो) की आंतरिक परतों को समझा नहीं जा सकता। सूफियों ने इस्लाम की ईश्वर विषयक कट्टरता को भी कम किया और किसी सीमा तक ईश्वर और भक्त के बीच उभर आये मध्यस्थों की फौज को भी चुनौती दी। उन्होंने ईश्वर या रब्ब की इस्लामी अवधारणा में भारतीय अवधारणा को भी कुछ सीमा तक समाविष्ट किया। सूफियों की रहस्यवादी चेतना भारतीय भक्ति योग के आस-पास ज्यादा ठहरती है । सूफीवाद जन साधारण के स्तर पर हिन्दू-मुस्लिम संवाद की सफलता का उदाहरण भी कहा जा सकता है। इसका एक कारण यह भी हो सकता है कि सूफी साधकों और सूफी संतों ने भारतीयों से संवाद रचना के लिये यहां के स्थानीय प्रतीकों, बिम्बों, ऐतिहासिक घटनाओं और ऐतिहासिक महापुरुषों का प्रयोग किया।

परन्तु यहां यह बात ध्यान में रखनी होगी कि हिन्दू-मुस्लिम संवाद रचना में सूफियों की भूमिका को लेकर विद्वानों में मतैक्य नहीं है। कुछ विद्वान तो सूफियों के इन प्रयासों को संवाद रचना के लिए किये गये सचमुच निष्कपट प्रयास मानते हैं। जबकि दूसरे विद्वानों का मत है कि इन सूफियों ने भारत वर्ष में इस्लामी प्रसार और स्थापना के लिये हरावल दस्ते का कार्य किया। इन्होंने सामान्य भारतीय जन को इस्लाम स्वीकार करने के लिये मनोवैज्ञानिक तौर पर तैयार किया। सूफी एक प्रकार से भारत वर्ष में इस्लामी सेना की इनफैन्ट्री थी जो तलवार का प्रयोग नहीं कर रही थी बल्कि भक्ति और सहज साधना के मनोवैज्ञानिक हथियारों से आम भारतीय को राष्ट्रीयता और आध्यात्मिकता के अखाड़े में इस्लाम पंथी बनाने में जुटी हुई थी। सूफियों के कार्य का आकलन चाहे जिस दृष्टिकोण से किया जाये परन्तु एक बात स्वीकार करनी होगी कि हिन्दू-मुस्लिम संवाद रचना के इस सूफी पड़ाव को लांघे बिना हिन्दू-मुस्लिम संवाद को उसके सही परिप्रेक्ष्य में नहीं समझा जा सकता।

इस्लामी शासन काल में अकबर ने सत्ता आकांक्षा से हिन्दू-मुस्लिम संवाद का प्रयास किया था। उसने इस्लाम के स्थान पर एक नये मजहब दीने-इलाही की घोषणा की जिसे अप्रत्यक्ष रूप से इस्लाम का भारतीयकरण भी कहा जा सकता है। (यहां यह ध्यान रखना चाहिये कि मुसलमानों के भारतीयकरण और इस्लाम के भारतीयकरण में एक बुनियादी अन्तर है। मुसलमानों के भारतीयकरण का अर्थ उन्हें ज्यादा से ज्यादा पुरानी विरासत से जोड़े रखने का प्रयास ही है जब की इस्लाम के भारतीयकरण का अभिप्राय: उसकी आध्यात्मिकता या शरा संबंधी अवधारणाओं का भारतीय अवधारणा से संतुलन बैठाना है। मुसलमानों का भारतीयकरण एक प्रकार से कुछ सीमा तक शरीयत का भारतीयकरण है जब कि इस्लाम का भारतीयकरण कुछ सीमा तक शरा का भारतीयकरण

है।) वास्तव में हिन्दू-मुस्लिम संवाद का यही विस्तृत फलक है। परन्तु दुर्भाग्य से अकबर अपने इस प्रयास में सफल नही हो पाया। इस्लाम के कट्टरपंथी तत्वों ने और मुल्ला-मौलवियों ने अकबर के इस द्विपक्षीय संवाद का विरोध किया। विरोध का एक कारण इस्लामी कट्टरता हो सकती है और दूसरा कारण पराजितों से संवाद रचना करना और वह भी इस्लाम के तथाकथित सिंहासन से कुछ सीढ़ी नीचे उतर कर मुल्ला-मौलवियों को गवारा नहीं हुआ होगा। परन्तु कुछ विद्वान ऐसा भी मानते हैं कि अकबर भी दीने-इलाही के नाम पर इस्लाम को ही अप्रत्यक्ष रूप से थोपने का प्रयास कर रहा था। कारण चाहे जो भी हो, इससे एक और तथ्य स्पष्ट हो जाता है कि मुल्ला-मौलवियों का प्रभाव और उनकी जकड़न इस कदर शक्तिशाली है कि उन्होंने अपने वक्त के सबसे शक्तिशाली राजा के प्रयासों को भी विफल कर दिया। यह हिन्दू-मुस्लिम संवाद रचना के सबसे महत्वपूर्ण अध्याय का दुखांत है।

हिन्दू-मुस्लिम संवाद का एक और प्रयास शाहजहां के बेटे और औरंगजेब के भाई दाराशिकोह ने किया था। यह प्रयास अकबर के प्रयास से भी ज्यादा गम्भीर था और इस्लामी पूजा पद्वति व ईश्वरीय अवधारणा को ही प्रश्नित करते हुये भारत की मिट्टी से भावात्मक और पहचान के स्तर पर जुड़ने का ईमानदार प्रयास था । दाराशिकोह ने सूफियों को प्रश्रय दिया और हिन्दू शास्त्रों का हिन्दी में अनुवाद कराया। दाराशिकोह शाहजहां का उत्तराधिकारी था लेकिन हिन्दू-मुस्लिम संवाद के उसके प्रयोगों के कारण मुल्ला-मौलवियों और औरंगजेब के हाथों उसे अपने प्राणों से हाथ धोने पड़े।

उधर १८वीं शताब्दी के आते आते भारतीयों के सम्मिलित संघर्षों ने देश के अधिकांश हिस्सों से इस्लामी मुगल सत्ता को उखाड़ फेंका था। मराठा शक्ति और उत्तर पश्चिम में खालसा सेनाओं ने सीमान्त प्रांत तक केसरिया ध्वज फहरा दिया था। वैसे भी १८ वीं शताब्दी का प्रारम्भ इस्लामी मुगल सल्तनत के अवसान का काल था। यहां तक आते आते इस्लाम की मारक धार भी कुंठित हो चुकी थी तथा उसके प्रहार की शक्ति भी। सत्ता के महलों में और राजनीति के गलियारों में शायद हिन्दू और मुस्लमान की अलग पहचान विद्यमान हो लेकिन धरातल पर दोनों समुदायों में भीतरी संचार के हजारों हजारों मार्ग खुल चुके थे। इस्लाम में दीक्षित हो चुके हिन्दुओं में भी जाति की पहचान इस्लाम की पहचान पर भारी पड़ने लगी थी। धरातल पर भाईचारा पनप रहा था। किसी न किसी स्तर पर इस्लाम के भारतीयकरण की प्रक्रिया आगे बढ़ रही थी।

इस मरहले पर १८ वीं शताब्दी के मध्य काल में भारत का अंग्रेजों से संपर्क हुआ। लेकिन यह संपर्क बहुत ज्यादा सुखद नही रहा और ७०-८० साल के अल्प काल में ही अंग्रेजों ने भारत के एक बहुत बडे भू-भाग पर कब्जा कर अपनी सत्ता सल्तनत स्थापित कर ली । कलियुगाब्द ४९५९ (सन् १८५७) में संपूर्ण भारतवासियों ने एक जुट हो कर अंग्रेजी राज को पछाड़ने के लिये आजादी की पहली लड़ाई लड़ी। आजादी के

सैनिकों ने अपना नेता बहादुर शाह जफर को चुना। आजादी की इस लड़ाई में हिन्दू और मुसलमान का रक्त एक साथ बहा। स्पष्ट था कि इस्लाम की पहचान राष्ट्रीय पहचान के रास्ते में नहीं आ रही थी। बहादुर शाह जफर ने दिल्ली में गौ हत्या पर प्रतिबंध लगा दिया। आजादी की इस लड़ाई में भारत की पराजय हुई और अंग्रेजों की जीत हुई, लेकिन इस लड़ाई ने हिन्दू-मुसलमान के धरातल पर विकसित हुये भाईचारे को प्रमाणित कर दिया। रंगून में जलावतन होने से पहले बहादुर शाह जफर ने कहा –

जब तलक गाजियों में बू रहेगी इमान की,
तख्ते लन्दन तक चलेगी तेग हिन्दोस्तान की।

यहां ध्यान देने योग्य बात यह है कि जफर ने इस्लाम की तेग नहीं कहा बल्कि हिन्दोस्तान की तेग कहा । लेकिन इसका अर्थ यह नहीं कि जफर इस्लाम को छोड़ चुके थे। वे मोमिन ही थे। भारत पर आक्रमण करने वाले मुसलमान राजा अरब, तुर्क, ईरानी, अफगानी, तातार थे। लेकिन धीरे-धीरे भारत की मिट्टी ने अरबी, ईरानी, अफगानी, तुर्की और तातारी पहचान को आत्मसात करने की प्रक्रिया प्रारंभ की। परन्तु इस प्रक्रिया में सबसे बड़ी बाधा यही थी कि अरबी, ईरानी, अफगानी, तुर्की और मुगल जो भारत के बाहर से आए थे, उनकी संख्या बहुत ज्यादा नहीं थी और वे या तो प्रत्यक्ष सत्ता में थे या सत्ता दरबार के आसपास थे या फिर सत्ताधीशों की सेना के अंग थे। सत्ता का यही अभिमान उनको भारतीय आबोहवा से दूर रखे हुए था, दूसरा वे इस्लाम के सामाजिक और मजहबी दर्शन में कुछ सैकड़ों साल पहले ही दीक्षित हुए थे। इसलिए इस सामाजिक और मजहबी दर्शन में उनका विश्वास और आस्था अंधविश्वास की हद तक था और उसको आगे बढ़ाने में मजहबी जज्बा लाजवाब था। उनका भारतीयकरण या उनको यहां की आबोहवा में आत्मसात करना इतना सरल नहीं था। परन्तु इन मुसलमान आक्रमणकारियों ने जिन भारतीयों को इस्लाम के मजहब में बलपूर्वक या छलपूर्वक दीक्षित करना शुरू कर दिया था, उनके माध्यम से इस्लाम के भारतीयकरण की प्रक्रिया किसी न किसी रूप में अवश्य प्रारंभ हो गई थी। इसलिए परिवर्तित भारतीय मुसलमानों को मुहम्मद पंथी हिन्दू भी कहा जा सकता था। यह इस्लाम के भारतीयकरण की प्रक्रिया का एक चेहरा था।

संश्लेषण की इसी प्रक्रिया के कारण कलियुगाब्द ४९५९(सन् १८५७) के स्वतंत्रता के प्रथम संग्राम में अन्य भारतीयों के साथ मुसलमान भी कंधे से कंधा मिलाकर लड़े। लेकिन यहां यह भी ध्यान रखना होगा कि इस प्रथम स्वतंत्रता संग्राम में भी इस्लाम का एक कट्टरपंथी समूह ऐसा भी था जो अपने आप को मुसलमान विदेशी आक्रांताकारियों से जोड़कर देखता था और उनको यह भ्रम था कि अंग्रेजों ने भारत की सत्ता उन्हीं से छीनी है इसलिए यदि अंग्रेज यहां से जाते हैं तो सत्ता का अधिकार उन्हीं को मिलना चाहिए, आम भारतीय को नहीं। फिर यह आम भारतीय मजहब से इस्लामपंथी हो, सिख पंथी हो, जैन पंथी हो, बुद्ध पंथी हो, शैव पंथी हो या लिंगायत हो।

कलियुगाब्द ४९५९(सन् १८५७) की आजादी की पहली लड़ाई के बाद अंग्रेजी सल्तनत के आगे मुख्य कार्य था हिन्दू और मुसलमानों के इस भाईचारे में दरारें डालना और उनकी राष्ट्रीय पहचान को गौण बनाना और इस्लामी पहचान को प्राथमिकता देना। यदि हिन्दू और मुसलमान भाईचारा टूटता है और उनकी समान राष्ट्रीय पहचान खंडित होती है तो स्वभाविक है अंग्रेजी राज को दी गई कलियुगाब्द ४९५९(सन् १८५७) की चुनौती या तो समाप्त हो जायेगी या फिर खंडित हो जायेगी। अंग्रेज अपनी इस रणनीति में बहुत हद तक सफल रहे। उन्होंने इस कार्य के लिये सैयद अहमद, अल्लामा इकबाल और मोहम्मद अली जिन्ना जैसे अनेक पंच मार्गी मैदान में उतारे जिन्होंने प्रयास पूर्वक मुसलमानों को देश की मुख्य राष्ट्रीयधारा से अलग किया। इस्लामी पहचान को प्रकारांतर से राष्ट्रीय पहचान ही घोषित कर दिया। इस प्रकार राष्ट्र के भीतर एक नये इस्लामी राष्ट की पहचान पैदा कर दी। हिन्दू और मुस्लिम के संवाद चैनलों को अवरूद्ध कर दिया। वहां अविश्वास और संशय की फसल बो दी। यह ठीक है कि इस सब के बावजूद अंग्रेजी सल्तनत को दी जाने वाली भारतीय चुनौती समाप्त तो नहीं हुई परन्तु वह किसी हद तक खंडित अवश्य हो गई। यही कारण है कि जब अंग्रेज यहां से गये तो भारत खंडित हो गया। बहादुर शाह जफर हिन्दोस्तान की जिस तेग के लंदन तक चलने की कल्पना करते थे वह तेग अंतत: भारत माता के वक्ष स्थल पर ही चली। इस में जफर का कोई दोष नही है, उनकी कल्पना का भी कोई दोष नही है। क्योंकि जफर का यह विश्वास सशर्त था और वह शर्त यह थी कि हिन्दोस्तान की तेग तख्ते लंदन तक चले उसके लिये जरूरी है कि गाजियों में ईमान की बू बनी रहे। लेकिन दुर्भाग्य से गाजियों ने ब्रिटिश साम्राज्यवाद का शिकार होकर अपने ईमान की बू छोड़ दी। उन्होंने अपनी पहचान अपने भाई से अलग घोषित कर दी और इसे भी इतिहास की त्रासदी ही कहना चाहिये कि इस अलग पहचान के लिये उन्होंने इस्लाम का सहारा लिया।

कलियुगाब्द ४९५९(सन् १८५७) के स्वतंत्रता संग्राम के असफल हो जाने के उपरान्त अंग्रेज हिन्दू-मुस्लिम भाईचारे में दरारें डालने में मशगूल हो गये तो दूसरी तरफ भारतीय अथवा हिन्दू समाज सार्थक संवाद रचना में जुटा। इस पूरी लड़ाई में सबसे खतरनाक बात यह थी कि जब पूरा भारतीय समाज अंग्रेजों के खिलाफ संघर्षरत था तो एक तबके ने अपनी भारतीय पहचान को ही नकारना शुरू कर दिया (कालान्तर में वैकल्पिक पाकिस्तानी पहचान स्थापित की गई) इस संक्रमण काल में हुए नुकसान की भरपाई के लिये हिन्दू-मुस्लिम संवाद के जो प्रयास हुये उनकी दिशा को लेकर मत भेद हो सकता है, लेकिन उद्देश्य को लेकर कोई मतभेद नही है। इस संवाद रचना में महात्मा गांधी का स्थान अत्यंत महत्वपूर्ण है, लेकिन यह भी अजीब संयोग है कि इस क्षेत्र में सबसे ज्यादा असफल भी गांधी जी हुये। मुसलमानों से संवाद स्थापित करने के चक्कर में गांधी जी ने तुर्की में खलीफा का पद समाप्त किये जाने के विरोध में भारत वर्ष में खिलाफत आन्दोलन छेड़ दिया, जब कि खिलाफत का न तो भारत से कोई ताल्लुक था

और न ही भारत के मुसलमानों से। गांधी जी ने तो खिलाफत आन्दोलन में पूरी कांग्रेस पार्टी को ही झोंक दिया। यह वास्तव में संवाद की हड़बड़ी में मुसलमानों का तुष्टीकरण हो रहा था। गांधी जी के इस प्रयोग से सिद्ध हुआ कि सार्थक हिन्दू-मुस्लिम संवाद और मुस्लिम तुष्टीकरण में मौलिक अन्तर है। प्रसिद्ध इतिहासकार प्रो. देवेन्द्र स्वरूप गांधी द्वारा खिलाफत आंदोलन को दिये गये समर्थन की व्याख्या एक दूसरे तरीके से भी करते है। उनके अनुसार गांधी जी जानते थे कि आम मुस्लिम समाज पढ़े लिखे मुसलमानों को अपना नेता स्वीकार नहीं करता। वह अभी भी मुल्ला, मौलवियों और हाजियों की ओर ही नेतृत्व के लिए देखता है। गांधी जी खिलाफत आंदोलन से इसी वर्ग को अपने साथ जोड़ने की कोशिश कर रहे थे ताकि बाद में भारत के मुस्लिम समाज को भी स्वतंत्रता आंदोलन से जोड़ा जा सके। ऊपर से देखने पर चाहे दोनों लगभग एक समान ही दिखाई देते हैं। कांग्रेस समेत भारत के सभी राजनीतिक दल किसी न किसी सीमा तक आज भी हिन्दू-मुस्लिम संवाद के नाम पर इसी प्रक्रिया में लगे दिखाई देते हैं। क्योंकि यह प्रक्रिया अपनी संरचना में ही प्रदूषित है इस लिये इसका सार्थक परिणाम भी नही मिल रहा ।

दुर्भाग्य से अंग्रेजों द्वारा सत्ता हस्तांतरित किए जाने से पूर्व ही कांग्रेस ने मुस्लिम तुष्टिकरण की नीति प्रारंभ कर दी थी। कम्युनिस्ट पार्टी पहले से ही मुसलमानों के लिए अलग राष्ट्र के सिद्धान्त पर विश्वास करती थी और अंग्रेजों के चले जाने के बाद बने अधिकांश राजनैतिक दलों ने भी मुसलमानों के प्रति इसी तुष्टिकरण की नीति को अपनाए ही नहीं रखा बल्कि उसको बढ़ावा भी दिया। इसका एक कारण शायद यह भी हो सकता है कि भारतीय जनसंघ/भारतीय जनता पार्टी को छोड़कर इस देश के अधिकांश राजनैतिक दल कांग्रेस में से ही उपजे हैं।

इस देश का मुसलमान अन्य भारतीयों के साथ मिलकर रह नहीं सकता। यदि ऐसा होता है तो उनके साथ अन्याय होता रहेगा यह भावना मुसलमानों में बलवती होती गई। इस काल्पनिक अन्याय को दूर करने के लिए मुसलमानों ने अपने लिये भारत का एक हिस्सा निर्धारित कर लिया।

इससे मुसलमानों के साथ अन्याय दूर हुआ या नहीं, यह तो पाकिस्तान के सिन्धी, बलूच, पठान और मुहाजिर ही जानते होंगे, अलबत्ता भारत का अप्राकृतिक विभाजन अवश्य हो गया। साम्यवादी सोच के लोग अंग्रेजों की इस योजना के साथ ही थे क्योंकि कार्ल मार्क्स बरसों पहले कह गये थे कि भारत में अनेक राष्ट्र हैं। इसलिए कायदे से यदि कोई राष्ट्र अलग होना चाहता है तो किसी को क्या एतराज हो सकता है? परन्तु पाकिस्तान बनने के बाद भारत में करोड़ों मुसलमान बचे हुये हैं। सकारात्मक सोच तो यह हुई कि न लोगों ने द्विराष्ट्र के सिद्धान्त को अस्वीकार कर दिया परन्तु अब कुछ राजनैतिक दल यह सिद्ध करने में लगे है कि भारत के लोगों ने इन मुसलमानों पर अत्याचार करने के लिए ही इन्हें यहां रोके रखा। पाकिस्तान नहीं जाने दिया। और अब इस देश में उन पर अत्याचार हो रहा है– इसे मुसलमानों का सौभाग्य कहा जाए या दुर्भाग्य कि वे अब इंसान

न रह कर धीरे-धीरे एक बहुत बड़े वोट बैंक में परिवर्तित हो रहे हैं। देश में सत्ता तक पहुँचने का माध्यम लोकतंत्र ही है इसलिए वोट बैंक की अहमियत में खासा इजाफा हो गया है। अत: सरकारें और राजनैतिक दल बाकी सब काम छोड़कर इन्हीं के काल्पनिक दुख दर्द को समेटने में लगे हुए हैं। जब से देश की सत्ता पर कैथोलिक चर्च के कुछ भक्तों ने अप्रत्यक्ष रूप से कब्जा कर लिया है तब से मुसलमानों की चिंता कुछ ज्यादा ही होने लगी है क्योंकि ईसाईयत और इस्लाम दोनों ही पैगंबर की अवधारणा में विश्वास रखने वाले हैं। इससे दोनों काम एक साथ ही सध सकते हैं। या तो देश ही पैगंबरों के शिष्यों के हवाले हो जाएगा या फिर शिष्यों का वोट बैंक सत्ता की कुर्सी पर तो बैठा ही देगा ।

लेकिन इस खतरनाक खेल में देश संकट में भी पड़ सकता है इसकी किसी को चिंता नहीं है। सरकार अब इस हद तक नीचे गिर आई है कि वह भारतीय सेना में मुसलमानों की गिनती करवा रही है। उसको लगता है यदि सेना में मुसलमान कम हैं तो यह मुसलमानों के साथ बहुत बड़ा अन्याय है। भारतीय सेना अब तक मजहबी आधारों से उपर एक राष्ट्र की अवधारणा पर गठित विश्व की सर्वश्रेष्ठ सेना कही जाती है। वहां न कोई मुसलमान है, न कोई राधास्वामी है, न शिवभक्त है, न राम भक्त है, वहां केवल राष्ट्र के लिए समर्पित सैनिक हैं। मजहबी आस्थाएं सैनिक का व्यक्तिगत मामला है सेना को एक संस्था के तौर पर उससे कुछ लेना देना नहीं है। परंतु अब भारत सरकार मुसलमानों से हो रहे अन्यायों की खोज करते-करते सेना को मजहबी आधार पर बांटने का षडयंत्रकारी कार्य कर रही है।

तमिलनाडु के एक सज्जन ने इस विषय को लेकर राष्ट्रपति और प्रधानमंत्री के नाम एक महत्त्वपूर्ण संदेश भेजा है। उसने कहा है कि यदि अब भारत सरकार ने सभी प्रकार के कार्यों के लिए मजहब को ही आधार बनाने का निर्णय कर लिया है तो इस बात की भी गणना कर ली जानी चाहिए कि मुसलमानों में जनसंख्या के अनुपात में कितने आतंकवादी हैं, माफिया लीडर हैं, अपराधी सरगना हैं और आईएसआई के एजेंट हैं। उपर से यह बात व्यंग्य में कही दिखाई देती है लेकिन भीतर से यह गहरी वेदना को प्रेषित करती है।

सरकार की नजर में आदमी आदमी न रहकर मुसलमान होता जा रहा है। निर्भीक आदमी सरकार और राजनैतिक दलों के किसी काम का नहीं होता क्योंकि ऐसा आदमी निर्भय होकर चिन्तन करता है और उसके निष्कर्षों पर ही अपने व्यवहार को संचालित करता है।

इसलिये विभिन्न राजनैतिक दलों और सरकारों को डरे सहमे लोगों की भीड़ चाहिये। मुसलमानों के मामले में यही हो रहा है। वे अल्पसंख्यक हैं, उनकी संस्कृति और भाषा अलग है, उनके पूर्वज और इतिहास भी अलग है, ऐसे पता नहीं कितने तर्क उनको डराने और हांक कर अपने तबेले में ले आने के लिये इस्तेमाल किये जा रहे हैं। यह तबेला कांग्रेस बना रही है। अब लोहिया के शिष्यों की समाजवादी पार्टी भी इसी में शमिल हो

गई है। साम्यवादी तो मान कर ही चलते हैं कि इस तबेले की ठेकेदारी उन्हीं के पास है। मुसलमान को हिन्दुओं से जितना ज्यादा डराया जा सकता है, उतनी ही ज्यादा वोटों की बारिश की संभावना है। सरकार की चिन्ता एक केन्द्रीय विश्वविद्यालय अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय को मुसलमानों के लिये आरक्षित करने की है और बंगलादेश के लाखों घुसपैठियों को बाहर निकालने की बजाय उन्हें किसी न किसी प्रकार से संरक्षण देने की है। जब उच्चतम न्यायालय इन मामलों में सरकारी निर्णयों के खिलाफ निर्णय देता है तो सरकार उसे निरस्त करने के तरीके ढूंढती है। देश में पहली बार एक मंत्रालय बना दिया गया है जिसका प्रमुख काम ही सारे देश को जाति, मजहब ,सम्प्रदाय के आधार पर बांटकर सभी को एक दूसरे की तुलना में अल्पसंख्यक घोषित करके वैमनस्य के बीज बोना है। इसलिये अन्याय को ढूंढने के लिये यूरोपीय दूरबीनों का प्रयोग किया जा रहा है। राजेन्द्र सच्चर तो यह दूरबीन लगा कर भारतीय सेना तक में घुस गये। आखिर घुसें भी क्यों न, तबेले में बन्द मुसलमानों को अपनी सक्रियता का रपट कार्ड भी तो दिखाना है। यदि ये लोग तबेले से बाहर आ गये और सत्य के दर्शन कर सके, तो भारत वर्ष की मुख्य धारा में एकाकार भी हो सकते हैं। तब ये राजनीति में किसी काम के नही रहेंगे। इसलिये किसी न किसी ढंग से इनको यहां की विरासत व मुख्यधारा में मिलने से रोकने का प्रश्न है। राजनीति की दादागिरी करने वाले सभी इसमें व्यस्त हैं।

राजनीतिक दलों ने अपनी स्वार्थ साधना के लिये मुसलमानों के मनोविज्ञान में अलगाव की खाईयां पैदा कर रखी हैं। अन्यथा पिछड़ेपन के लिये क्षेत्रीय आधार वैज्ञानिक है न कि एक ही क्षेत्र की ईकाई में मजहबी आधार। यह सोच ही अपने आप में अवैज्ञानिक है। इटली की सोनिया गांधी की अपनी लाचारी हो सकती है लेकिन मुलायम सिहों व लालुओं की क्या लाचारी है?

सत्ता के दरबार में अब भी रायबहादुर व रायसाहब हीं नजर आ रहे हैं। इसलिये जब तमिलनाडु के एक सज्जन, जिनका ऊपर जिक्र किया गया है, ने कहा कि जब सारा वर्गीकरण ही मजहबी आधारों पर करना है– क्या पिछड़ापन और क्या विकास– तो मुसलमानों में गुंडे, बदमाशों, माफियाओं व स्मगलरों का प्रतिशत भी जांच लिया जाये, तो उसमें अनहोनी क्या है? आखिर दाऊद इब्राहिम पैदा करने का सौभाग्य कितने समाजों को मिल पाता है? मुसलमान समाज दाऊद की दिशा में प्रगति कर रहा है, उस पर श्वेत पत्र प्रकाशित करना भी तो सरकार का ही कर्तव्य है। आखिर देश को भी तो पता चले कि मुसलमान समाज किस क्षेत्र में पिछड़ा हुआ है और किस क्षेत्र में आगे बढ़ा हुआ है। तभी इस समाज के लिये कोई समन्वित कारगर योजना बन सकती है। जब सरकार इस बात पर अड़ ही गई है कि उसे मुसलमान समाज को जबरदस्ती मुख्यधारा से निकाल कर, राजनीति के एक अलग टापू पर ले जाकर उसके लिये अलग दस्तरखान बिछाना है, तो उससे पहले उसे एक निष्पक्ष आकलन तो कर ही लेना चाहिये ।

सोनिया गांधी एक बात भूल रही है कि मुसलमान का विकास पूरे देश के समग्र

विकास में ही निहित है। अलग अलग मजहबों के लिये विकास के अलग अलग टापू जमीनी स्तर पर दिमाग के भीतर अलगाव पैदा करेंगे, जो देश के लिये घातक होगा। हां, यदि विकास की आड़ में अलगाव ही राजनीतिक एजेंडा है, तो अलग बात है।

सोनिया गांधी एक गहरी रणनीति के अधीन चुन चुन कर ऐसे लोगों को महत्वपूर्ण पदों पर ला रही है जो इस देश की समरसता में जहर घोल सकें। अब्दुल रहमान अंतुले जो महाराष्ट्र में पहले भी अपने कारनामों के कारण काफी चर्चित हो चुके हैं, ने केन्द्रीय मंत्रिमंडल में शामिल होते ही संविधान की नई व्याख्या की है। उनके अनुसार यह ठीक है कि राष्ट्रपति अन्य क्षेत्रों में संविधान के विभिन्न उपबन्धों से बंधे हैं लेकिन वे उससे हट कर सेना के सर्वोच्च सेनापति भी हैं। इसलिये यदि देश में कहीं कोई काम उनकी अवधारणा के अनुसार न हो रहा हो तो वे वहां तुरन्त सेना भेज सकते हैं। अंतुले गुजरात में दंगों के समय राष्ट्रपति द्वारा सीधे- सीधे सेना भेजे जाने की वकालत कर रहे थे। कल अंतुले मुसलमानों पर हो रहे तथाकथित अत्याचारों को रोकने के नाम पर अमेरिका के राष्ट्रपति को भी निमंत्रण दे सकते हैं?

आखिर मुसलमानों में तथाकथित अन्याय को रोकने के नाम पर दस जनपथ में परदे के पीछे यह क्या खिचड़ी पक रही है? प्रधानमंत्री डा० मनमोहन सिंह तो मुसलमानों के तुष्टिकरण में सभी मर्यादाओं को लांघ गये हैं।

पिछले दिनों देश के सभी मुख्यमंत्रियों को कॉंग्रेस सरकार के प्रधानमंत्री ने साफ-साफ बता दिया कि इस देश के संसाधनों पर पहला हक मुसलमानों का बनता है। बाकी भारतवासियों का जहाँ तक प्रश्न है उनका हक इस देश पर मुसलमानों के बाद आता है। भारत के लोग कॉंग्रेसी प्रधानमंत्री की इस घोषणा से आहत थे, तो प्रधानमंत्री ने दूसरा चौका मारा। उन्होंने कहा कि सारा यूपीए उनकी इस घोषणा के पीछे चट्टान की तरह खड़ा है। मनमोहन सिंह को शायद इसके बारे में पूरी जानकारी नहीं है। क्योंकि वे अर्थशास्त्र के विद्यार्थी हैं इतिहास के नहीं। अत: यदि वे चाहें तो नि:संकोच अपने इस ज्ञान को संशोधित कर सकते हैं। वे पूरे विश्वास के साथ इसमें यह भी जोड़ सकते है कि यूपीए के अतिरिक्त पूरा पाकिस्तान, बांग्लादेश, सऊदी अरब समेत सभी मुसलमान देश इस मसले पर उनके साथ चट्टान की तरह खड़े हैं। यदि भारत के लोग प्रधानमंत्री की मुसलमानों के हक के थीसिस को स्वीकार नहीं करते हैं तो इन देशों के लोग कॉंग्रेस की सहायता के लिए जिहाद करने के लिए तैयार हैं।

यह भारत के लोगों का सौभाग्य है कि उन्होंने भारत भूमि पर कभी अपना हक नहीं जताया। उन्होंने सदा इस भूमि को माँ माना है और इसे भारत माता कहा है। पुत्र कभी माता पर हक नहीं जताते। वे उसकी सेवा में ही सुख मानते हैं। अपितु इस देश का यह दुर्भाग्य जरूर रहा है कि पश्चिमी एशिया में इस्लाम के उदय के बाद मुसलमानों ने इस देश के संसाधनों पर अपना हक जमाना शुरू कर दिया था। शायद यही हक जमाने के लिए अरबों, तुर्कों, इरानियों पठानों, तातारों, मुगलों ने हिन्दुस्तान पर हमला किया था और

उसने भारत पर अपना हक जता भी दिया था और जमा भी लिया था। जिन लोगों ने उनके इस हक का विरोध किया उनका जो हश्र हुआ वह इतिहास जानता है। पृथ्वीराज चौहान इस हक का विरोध करते हुए मारे गए। गुरु तेग बहादुर दिल्ली के चाँदनी चौक में शहीद करवा दिए गए। बंदा बहादुर का अंग-अंग काट लिया गया। उनके बेटे की हत्या उन्हीं की आँखों के सामने की गई। लेकिन इस भारत पर और इसके संसाधनों पर हक जमाने की लड़ाई जो सातवीं शताब्दी से मोहम्मद बिन कासिम के आक्रमण से शुरू हुई थी वह एक प्रकार से आज तक चल रही है। कलियुगाब्द ५०४९(सन् १९४७)में मुस्लिम समुदाय ने भारत के एक भू-भाग पर सफलतापूर्वक अपना हक जमा लिया और उसे देश की मुख्य धारा से काटकर इस्लामी परम्परा के अनुसार पाक घोषित कर दिया। जाहिर है कि भारत का जितना हिस्सा बचा उस पर और उसके संसाधनों पर हक जमाने के लिए उन्होंने अपना जिहाद और तेज कर दिया।

पंडित जवाहर लाल नेहरू के काल से ही काँग्रेस इस देश को माता के सदृश न मानकर इसे केवल धरती का एक टुकड़ा मानती रही। शायद इसीलिए जब चीन ने मातृ भूमि के एक अंग पर अपना हक जमा लिया तो पंडित जवाहर लाल नेहरू ने उस हक का विरोध करने के बजाय भारत माँ के उस भू-भाग को बंजर बताकर पल्ला झाड़ लिया और अब काँग्रेस के ही प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह ने सीधे-सीधे यह घोषणा करके कि मुसलमानों का इस देश के साधनों का पहला हक है, स्पष्ट कर दिया कि काँग्रेस इस देश के बारे में क्या सोचती है और भारत माता के प्रति उसका दृष्टिकोण क्या है? मनमोहन सिंह ये मानते है कि मुसलामानों का भारत पर पहला हक है और उन्होंने अपनी इस मान्यता का उद्घोष बिना किसी लाग लपेट के साफ-साफ किया है। क्या यह केवल वोटों की खातिर मुसलमानों को प्रसन्न करने की चाल है? या फिर काँग्रेस के मनोविज्ञान का सही-सही दर्शन है। मनमोहन सिंह पर यह आरोप तो कोई नहीं लगा सकता कि वे अपने देश के खिलाफ कोई षड्यंत्र कर रहे हैं और न ही उन पर कोई यह आरोप लगा सकता है कि वे किसी अंतर्राष्ट्रीय रणनीति के तहत ऐसा बेहूदा बयान दे रहे हैं। मनमोहन सिंह सेक्युलरिस्टों की उस जमात का प्रतिनिधित्व करते है जो भारत के साथ माता शब्द लगाने को साम्प्रदायिकता मानती है। भारत माता, वन्दे मातरम्, पावन नदियाँ, भक्ति का प्रतीक भक्ति साहित्य इस जमात की दृष्टि में साम्प्रदायिकता का सबूत है। इस जमात को लगता है कि जब तक इस देश के लोग भारत के साथ पुत्रवत् भाव से जुडे रहेंगे तब तक यह देश दकियानुसियों का अखाड़ा बना रहेगा। इनकी दृष्टि में भारत भोग्या भूमि है तो जाहिर है उस पर हक जताना पड़ेगा। उपासना की भूमि होगी तो उस पर हक नहीं जताया जाएगा बल्कि उसके आगे नतमस्तक हुआ जाएगा। यही कारण है कि भारत भूमि के पुत्र माँ की वंदना करते हैं। वंदे मातरम् का गान करते हैं। इस भूमि के जो संसाधन है, वे संसाधन भारत माता अपने पुत्रों के लालन पालन के लिए प्रयोग करती है। वेद में कहा गया है पृथ्वी मेरी माँ मैं इसका पुत्र हूँ। भारत में तो केवल भरतखण्ड को ही नहीं बल्कि संपूर्ण

पृथ्वी को माता के समक्ष माना गया है जैसे माता अपने पुत्रों का लालन-पालन करती है वैसे ही पृथ्वी अपने संसाधनों से अपने पुत्रों का लालन-पालन करती है। मनमोहन सिंह किसान नहीं है इसलिए शायद उन्होंने कभी खेती भी नहीं की होगी परंतु इतना तो उन्हें भी पता होगा कि इस देश के करोडों-करोडों किसान धरती पर हल चलाने से पहले पुत्रवत् क्षमा माँगते हैं। धरती माता के संसाधनों का वे उतना ही प्रयोग करते हैं, जितने से उनका लालन-पालन हो सके। साधनों का दोहन किसान की दृष्टि में माता के प्रति अत्याचार ही माना जाता है। परंतु जब किसी देश पर दूसरे देश के लोग आक्रमण कर देते हैं तो वे विजित देश के प्रति माता का भाव नहीं रख सकते बल्कि उस पर हक जताते हैं। सैक्युलरिस्टों की जमात अपने आप को सेक्युलर बताने के लिए हक जमाने वाले गिरोह के साथ जुड़ गई है। उनके सामने मुख्य प्रश्न यह है कि इस देश पर जिसका नाम भारत है, पहला हक किसका बनता है? मनमोहन सिंह की दृष्टि में या फिर जिस पार्टी का वह प्रतिनिधित्व करते हैं उस काँग्रेस की दृष्टि में या फिर जिन कम्युनिस्टों की बैसाखियों पर वे खड़े हैं, उनकी दृष्टि में मुसलमानों का हक इस देश पर पहले बनता है। जैसा कि हमने ऊपर कहा है हक जताने की यह लड़ाई लंबे काल से चली हुई है। एक वक्त था जब भारत पर दुनिया की गोरी नस्लों ने भी हक जताया था। लेकिन एक लंबे संघर्ष के बाद उनको अपना हक छोड़ना पड़ा। परंतु दुर्भाग्य से हक जताने के नए तरीके शुरू हो गए हैं। भारत के लोग डा. मनमोहन सिंह से केवल एक ही प्रश्न पूछना चाहते हैं कि इटली का हक इस देश पर मुसलमानों से पहले बनता है या उनके बाद। ताकि कम से कम उन्हें इतना तो मालूम हो सके कि इक्कीसवीं शताब्दी के इस महाभारत में कौन किसके साथ खड़ा है? जहाँ तक वामपंथी मोर्चे का प्रश्न है उन्होंने भी अपनी प्राथमिकता प्रत्यक्ष अप्रत्यक्ष जाहिर कर ही दी है कि भारत माता के एक अंग पर चीन का हक बनता है। उनका केवल यही कहना है कि चीन को यह हक शांतिपूर्वक बातचीत से ही दे देना चाहिए। वैसे चीन तो यह हक बल पूर्वक लेने को भी तैयार है। जिसकी शुरूआत उसने कलियुगाब्द ५०६४ (सन् १९६२) में ही कर दी थी। साम्यवादी तो कलियुगाब्द ५०६४ (सन् १९६२) से ही चीन के इस हक को मान्यता दे रहे हैं। शुक्र है मनमोहन सिंह ने अपने इस थीसिस की घोषणा कलियुगाब्द ५१०८ (सन् २००६) में की है, यदि कलियुगाब्द ५०४९ (सन् १९४७)में कर देते तो सारा भारत ही पाकिस्तान बन जाता। मनमोहन सिंह ने अपने पाले की घोषणा कर दी है। धीर-धीरे बाकियों के नकाब भी उठने शुरू हो जाएंगे।

वास्तव में मनमोहन सिंह जब देश पर मुसलमानों के *'सबसे पहला हक'* की घोषणा करते है तो उसके पीछे छिपा हुए एक पूरा मनोवैज्ञानिक दर्शन है। देश का आम मुसलमान इस भ्रम की स्थिति में जी रहा है कि वह अंग्रेजों के आने से पूर्व इस देश का शासक था और हिन्दुओं पर राज कर रहा था परंतु जब अंग्रेज यहां से गए तो सत्ता हिन्दुओं के हाथ चली गई। मानसिक तौर पर उन्हें यह अन्याय प्रतीत हो रहा है। परंतु मुख्य प्रश्न यह है कि क्या अंग्रेजों के आने से पूर्व यहां का मुसलमान सचमुच इस देश का

शासक था या वह भी हिन्दुओं की तरह शासित वर्ग में आता था? कटु सच्चाई यह है कि भारत के मुसलमान का शासक वर्ग से कोई ताल्लुक नहीं था। वह भी हिन्दुओं की तरह शासित ही था। क्योंकि देश पर विदेशी मुस्लिम शासकों का शासन था और भारत के देशी मुसलमानों का इन शासकों से दूर नजदीक का भी संबंध नहीं था। ये इसी देश के रहने वाले हिन्दू थे जिन्होंने अनेक कारणों से अपनी पूजा पद्धति को छोड़ कर विदेशी शासकों की पूजा पद्धति को अपना लिया था। लेकिन केवल विदेशी शासकों की पूजा पद्धति को अपना लेने मात्र से ही तो ये देसी मुसलमान विदेशी शासकों की विरासत से नहीं जुड़ सकते थे। इनकी विरासत की जड़े तो इसी मुल्क में थीं। परन्तु ऐसा माना जा सकता है कि विदेशी शासकों के हम मजहब होने के कारण देसी मुसलमानों को शासन की ओर से कुछ रियायतें और सुविधाएं मिलती रही होंगी। उससे इन मुसलमानों का झुकाव स्वाभाविक ही विदेशी शासकों की ओर हुआ होगा। देश की विरासत से टूटने का मनौविज्ञानिक दबाव भी इन मुसलमानों पर आक्रांता शासकों की ओर से रहा होगा। हिन्दू समाज में सामाजिक विषमता जिस गहरे रूप में विद्यमान है, मजहब परिवर्तन कर लेने के उपरांत उसका दंश इन मुसलमानों के प्रति अधिक तीक्ष्ण हो गया होगा उस मनोवैज्ञानिक प्रतिक्रिया के कारण भी ये देशी मुसलमान विदेशी शासकों से जुड़ने के रास्ते तलाशने लगे। कुल मिलाकर इस मानसिक कल्पना में उन्होंने अपने आपको विदेशी शासकों के कुनबे का ही हिस्सा मान लिया। इसी मानसिक काल्पनिक संसार में उनके नायक बदल गये, आस्थाएं बदल गईं, प्रेरणा के स्रोत बदल गये और जड़ें किसी और मिट्टी में प्राणतत्व तलाशने लगीं और धीरे-धीरे उनके लिए भारत भूमि मातृभूमि न रह कर भोग्या भूमि बन गई। इसी काल खंड में अंग्रेजों ने मुसलमान शासकों को सत्ताच्युत किया और जब उनके जाने की बारी आयी तो मुसलमान नेतृत्व तार्किक रूप से भारत का शासन पाने की मानसिकता में था जिसकी कोई संभावना दिखाई नहीं दे रही थी। दूसरा विकल्प यही था कि यदि मुसलमान सारे हिन्दुस्थान पर राज नहीं कर सकते और नई लोकतांत्रिक व्यवस्था में पुराने राज्य के लौट आने की संभावना भी शून्य है तो कम से कम देश को तोड़कर ऐसा देश बना लिया जाए जिस में मुसलमानों का अपना राज्य हो। इससे पुराने तथाकथित शासक नई व्यवस्था में हिन्दुओं से शासित होने से तो बच जाएंगें। पाकिस्तान का निर्माण इसी पृष्ठभूमि में देखा जाना चाहिए। पाकिस्तान ने तो इसी सिद्धांत को आगे बढ़ाते हुए अपने देश से लगभग सभी हिन्दुओं को निकालकर उसे इस्लामी देश घोषित कर दिया। लेकिन भारत से विभाजन के उपरांत भी सभी मुसलमानों को निकाला नहीं गया था, इसलिए उनमें अपनी स्थिति को लेकर वही उहापोह विद्यमान है जो विभाजन से पहले थी। आज विभाजन के छह दशक बाद भी ये प्रश्न उसी प्रकार फन तान कर खड़े हैं जिस प्रकार स्वतंत्रता से पूर्व थे। बीच में एक बार प्रो. बलराज मधोक ने मुसलमानों के भारतीयकरण की बात करके सारे प्रश्न को बीच चौराहे नंगा कर दिया था और इस पर तीखा मंथन भी प्रारंभ हो गया था। लेकिन इससे मानसिक रूप से दुविधाग्रस्त और

काल्पनिक डर से ग्रस्त एक समुदाय के ठोस वोट बैंक के पिघल जाने का खतरा उत्पन्न हो गया था। जाहिर है इससे उन राजनैतिक दलों को क्षति होती जो इस समुदाय को सदा सर्वदा अलग ठोस आकार में रखकर भारत की पाश्चात्य लोकतांत्रिक व्यवस्था में इस ठोस पिंड का दुरुपयोग करके सत्ता हासिल करते हैं। इसलिए उन राजनैतिक दलों ने बहस में हिस्सा लेने के लिए तैयार हो रहे इस समुदाय को जल्दी-जल्दी रंगबिरंगें कंबलों से ढककर उन अंधेरी बंद गलियों में धकेल दिया जहां जाकर ये फिर हिन्दुस्तान के बादशाह बन जाते थे। इन राजनैतिक दलों ने मुसलमानों के भारतीयकरण के पक्षधरों को बाकायदा गालियां निकाली और घोषित किया कि ये बेचारे अल्पसंख्यक और पीड़ित लोग भारतीयकरण की ठंडी हवा में रह लेते तो भयंकर निमोनिया होने का खतरा था।

अब जब भारत २१वीं सदी में प्रवेश कर गया है तो मुसलमानों की दशा और दिशा की स्थिति को लेकर एक बार फिर सार्थक बहस शुरू हुई है। इस बहस में एक पक्ष उनका है जो अभी भी मुसलमानों को अलीगढी और बहावी शैली में समझा रहें हैं कि वे हिन्दुस्तान के शासक रहे हैं और उनका इस देश की मिट्टी से कुछ लेना देना नहीं है। इस पक्ष में वे लोग भी जुड़ जाते हैं जो यह स्वप्न दिखाकर बाद में उनके हाथों में ए.के.४७ थमा देते हैं या फिर उनकी कमर के इर्द गिर्द बारूद बांधकर उन्हें मानव बम बनाकर जन्नत का रास्ता दिखा देते हैं। एक छोर पर शासक पद से च्युत होने की ग्लानि है और दूसरे छोर पर उसी ग्लानि से उपजा हुआ जिलानी है और इन दोनों में दौड़ता हाँफता हुआ आम मुसलमान है।

हिन्दू-मुस्लिम संवाद रचना में एक महत्वपूर्ण अध्याय राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ का भी है। यह अध्याय कमोवेश कलियुगाब्द ५०२७ (सन् १९२५) में संघ की स्थापना से ही शुरू हो गया था जो किसी न किसी रूप में आज तक जारी है। इसमें एक महत्वपूर्ण मोड़ आपात स्थिति में आया जब राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ और मुस्लिम संगठनों के महत्वपूर्ण व्यक्तियों को एक साथ कारागर में रहने का अवसर प्राप्त हुआ। प्रत्यक्ष संवाद रचना से एक दूसरे को समझने का मौका मिला और एक दूसरे को लेकर संशय संदेह और भ्रम की भावना में भी कमी आई। इस संवाद को संघ के निर्वतमान सरसंघचालक सुदर्शन जी ने गति प्रदान की। जम्मू कश्मीर के मुस्लिम बहुल क्षेत्रों में एक लम्बे अरसे तक राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ का कार्य कर चुके इन्द्रेश कुमार ने इस महत्वपूर्ण संवाद रचना के लिये व्यास पीठ का निर्माण किया। इन्द्रेश कुमार के प्रयासों से इक्कीसवीं शताब्दी के शुरूआती दौर में ही संघ और मुसलमान एक दूसरे से रूबरू हुये। मकसद कलियुगाब्द ४९५९ (सन्‌ १८५७) के भाईचारे की उन्हीं पुरानी गलियों की खुदाई करना था जिन पर अंग्रेजों के षड्यंत्रों से ढेरों कंकड पत्थर जमा हो गये थे। राष्ट्रवादी मुस्लिम आन्दोलन इसी संवाद संरचना का प्रतिफलन है।

भारत में मुसलमानों को लेकर राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के चिंतन व अवधारणा की मोटी रूपरेखा निम्न उद्धरणों से समझी जा सकती है। ये उद्धरण सुषमा पाचपोर,

विराग पाचपोर, शहना अफजाल और मुहम्मद अफजाल द्वारा सम्पादित ग्रन्थ राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य में मुसलमान में से लिए गए हैं।

- भारत की भूमि पर मुस्लिमों के आक्रमण से राष्ट्रीय मंच पर एक नई चुनौती उत्पन्न हो गई थी। - डा.हेडगेवार , पृष्ठ ३।

  वे (डा.हेडगेवार) अच्छी तरह जानते थे कि मुसलमानों का हृदय जीतने के लिए किसी भी तरह की राजनीतिक सौदेबाजी का नतीजा अच्छा नहीं होगा। इससे उनका मानस नहीं बदलेगा और जब तक उनके मानसिक दृष्टिकोण में परिवर्तन नहीं होगा स्थायी एकता असंभव है। डा.हेडगेवार, पृष्ठ ३३
- कोई भी मुसलमान इस ऐतिहासिक तथ्य की ओर से आंखे नहीं मूंद सकता कि कुछ शताब्दियों पूर्व वे भी हिन्दू ही थे। उनमें (मुसलमानों में) अपने पूर्वजों के प्रति आदर, श्रद्धा भाव जागेगा और वे राष्ट्र की प्रमुख जीवन धारा में शामिल होंगे। विशुद्ध राष्ट्र भाव का जागरण ही राष्ट्रीय एकता की स्थाई और सुदृढ बुनियाद हो सकती है। — डा. हेडगेवार, पृष्ठ ३४
- भारतीय मुसलमान भी उसी ऐतिहासिक प्रजाति, सभ्यता और संस्कृति के अंग हैं, जिसके हिन्दू और अन्य मतावलंबी — डा.हेडगेवार, पृष्ठ ३५
- डा. हेडगेवार की मान्यता थी कि पांथिक स्तर पर अलग-अलग मतों को मानने वाले लोगों की राष्ट्रीयता के प्रश्न पर अलग-अलग राय नहीं हो सकती। किसी भी राष्ट्र की राष्ट्रीयता एक ही होती है मिश्रित नहीं।
- स्वराज्य का प्रश्न सभी पंथों एवं जातियों के लिए एक जैसा है। अत: किसी मत अथवा जाति के लोगों को इसकी प्राप्ति के लिए विशेष सुविधाएं देने की बातों का परिणाम राष्ट्र के लिए हितकर नहीं होता है। —डा.हेडगेवार, पृष्ठ ३९
- यह बात हमेशा ध्यान में रखने होगी कि हम सबके पूर्वज एक ही हैं और हम सब उनके वंशज हैं। आप अपने-अपने मतों का प्रामाणिकता से पालन करें। परंतु राष्ट्र के मामले में सबको एक होना चाहिए। राष्ट्रहित के लिये बाधक सिद्ध होने वाले अधिकारों और सहूलियतों की मांग बंद होनी चाहिए। —गुरु गोलवलकर, पृष्ठ ४४
- इस्लाम धर्म गोहत्या का आदेश नहीं देता। पुराने जमाने में हिन्दुओं को अपमानित करने का वह एक तरीका रहा होगा। अब वह क्यों चलना चाहिए? —गुरु गोलवलकर, पृष्ठ ४४
- भारतीयकरण का यह अर्थ नहीं है कि कोई अपनी पूजा-पद्धति त्याग दे। यह बात हमने कभी नहीं कही और कभी नहीं कहेंगे। हमारी तो यह मान्यता है कि उपासना की एक ही पद्धति सभी मानव जातियों के लिये सुविधाजनक नहीं है।—गुरु गोलवलकर पृष्ठ,४९

- ये (मुसलमान) यहीं के रहने वाले हैं, खून एक है, बाप-दादा एक हैं, पूर्वज एक हैं, कुछ पीढ़ियों के पहले उन्होंने अपनी उपासना पद्धति में परिवर्तन किया होगा। उपासना पद्धति में परिवर्तन करने से परंपरा नहीं बदलती, संस्कृति नहीं बदलती, राष्ट्रीयता नहीं बदलती इस बात को ध्यान में रखना चाहिए। —श्री.म.द.देवरस पृष्ठ, ५४
- हिन्दू शब्द का उपयोग राष्ट्रीय अर्थ से, सांस्कृतिक अर्थ से होता है। उपासना पद्धति के अर्थ से होता ही नहीं। इसलिए मुसलमान और क्रिश्चिन यहाँ के रहने वाले हैं और हिन्दू राष्ट्र की व्यापक अवधारणा में उनका समावेश होता है। ऐसा हमारा कहना है। —श्री.म.द.देवरस, पृष्ठ ५४
- कलियुगाब्द ३८९० (सन् ७८८ ई.) के बीच मुसलमान केरल के किनारे पर आये। राजा हिन्दू था, प्रजा हिन्दू थी फिर भी मुसलमानों को आने दिया गया। रोजगार दिये गए। मकान बनाने को स्थान दिया। मस्जिद बनाने को जगह दी। धर्माचरण और धर्माचार का स्वातंय था जिसके कारण आज केरल में२० प्रतिशत मुसलमान हैं। —श्री.म.द.देवरस, पृष्ठ ५४
- मुस्लिम समाज आधुनिक पद्धति से सोचता नहीं। इसके बारे में इन मुस्लिम युवकों के मन में एक कसक है, व्यथा है। यह युवक नई पद्धति से विचार करने को तैयार हैं। परंतु प्रकट रूप से अपनी भावनाएं तथा विचार व्यक्त करने से डरते हैं। मैं यह जानता हूँ कि मुसलमानों की नई पीढ़ी उचित और योग्य पद्धति से विचार करने वाली है। उनमें से कुछ तरुण संघ के संपर्क में आये हैं। कहीं कहीं संघ की शाखाओं में भी मुस्लिम तरुण दिखाई देते हैं। — श्री.म.द.देवरस, पृष्ठ ५८
- दुर्भाग्य से आज हिन्दुस्थान में मुसलमानों का नेतृत्व शहाबुद्दीन, ओवैसी और जामा मस्जिद के इमाम जैसे कट्टरपंथी लोग कर रहे हैं और ये लोग चाहते हैं कि हिन्दुओं और मुसलमानों में संघर्ष कभी खत्म न हो, क्योंकि शायद इसी संघर्ष के कारण इनका नेतृत्व सुरक्षित है। लेकिन यदि हिन्दू मुसलमानों को भारत में शांति से रहना है तो दोनों के आपसी संबंध सुधरने ही चाहिए। यह तभी हो सकता है जब मुसलमानों के मध्य कोई नया नेतृत्व उभरे, जो आम मुसलमानों को यह समझा सके कि हिन्दुओं के साथ मिल-जुल कर रहना जरूरी है और साथ ही उन्हें यह भी समझना चाहिए कि इस देश में मुसलमानों को सब प्रकार का न्याय, धार्मिक स्वतंत्रता मिलने के बाद भी यह जरूरी है कि हिन्दू समाज से उनका किसी भी प्रकार से संघर्ष न हो। —प्रो.राजेन्द्र सिंह, पृष्ठ ६०
- जो मुल्ला-मौलवी या उसी मनोवृत्ति के मुसलमान नेता हैं, वे तो मुसलमानों को हिन्दू समाज से लड़वाए रखना चाहते हैं क्योंकि इसी में उनका नेतृत्व चमकेगा।

परंतु यह प्रवृत्ति यदि बढ़ती गई और मुसलमानों में कुछ उदारवादी लोग यदि नहीं दिखाई दिए तो संपूर्ण मुस्लिम समाज के विषय में हिन्दू समाज की धारणा बिगड़ जायेगी। –प्रो.राजेन्द्र सिंह, पृष्ठ ६३

- इस्लाम की अवधारणाओं की युगानुकूल व्याख्या करने के लिए प्राचीन व अर्वाचीन का ज्ञान रखने वाले इस्लामी विद्वान आगे आ सकते हैं। भारतीय दर्शन के आलोक में इस्लाम की अनेक हदीसों की नये सिरे से व्याख्या की जा सकती है। –श्री. कुप्प.सी. सुदर्शन, पृष्ठ ६५
- दो–तीन वर्ष पूर्व नागपुर के विजयदशमी के अवसर पर मैंने इस्लाम और ईसाई चर्च के भारतीयकरण की यह चर्चा छेड़ी थी। –श्री. कुप्प.सी. सुदर्शन, पृष्ठ ६८
- पाकिस्तान के कारण भारत के मुसलमानों को संदेह की दृष्टि से देखा गया। राजनीतिक नेताओं ने मुस्लिम समुदाय को वोट बैंक समझा। सत्ता की राजनीति ने और इस वोट बैंक की मानसिकता ने मुसलमानों को शेष समाज से अलग कर दिया। इसके कारण दूरियाँ पैदा हुई और गलत–फहमियाँ फैल गयी । –श्री. कुप्प.सी. सुदर्शन, पृष्ठ ६९
- अल्पसंख्यक की अवधारणा का प्रारंभ अंग्रेजों ने किया। इसका एकमात्र उद्देश्य मुसलमानों को राष्ट्रीय प्रवाह से अलग करना था। भारत में वास्तविक रूप से यहूदी तथा पारसी अल्पसंख्यक समाज है लेकिन उन्होंने कभी अल्पसंख्यक होने के आधार पर कोई सहूलियत नहीं मांगी, न ही कोई लाभ उठाने की कोशिश की। लेकिन मुसलमान, जो इसी देश के हैं और जिनके पुरखे तथा संस्कृति बहुसंख्यक हिंदुओं के साथ सांझी है, अपने आप को बहुसंख्यक समाज से अलग–थलग मानने लगे। उन्होंने मजहब बदला होगा। इसकी अनुमति तो हिंदू समाज में है ही, क्योंकि हिंदुओं का मानना है कि अंतिम सत्य एक ही है, विद्वान लोग उसे भिन्न प्रकार से बताते हैं और उस सत्य तक पहुंचने के मार्ग भिन्न हैं।–श्री. कुप्प.सी. सुदर्शन, पृष्ठ ७१
- लेकिन पाकिस्तानी शासक यह जानते हैं कि यदि भारत से ऐसे दोस्ताना संबंध स्थापित हो गये तो पाकिस्तान का अस्तित्व ही समाप्त हो जाएगा। इसलिए पाकिस्तान के शासक उनके तथा पाकिस्तान के अस्तित्व के लिए भारत विरोधी भावना को अवश्यक मानते हैं। ....उन्हें विदेशी आक्रान्ताओं से अपना संबंध नहीं जोड़ना चाहिए भले ही वे उनके सहधर्मी और समान आस्था में विश्वास रखने वाले हैं। –श्री. कुप्प.सी. सुदर्शन, पृष्ठ ७१

आज भारत का मुसलमान समाज एक दुविधा में फंसा है। वे अपने आप को पश्चिमी एशिया के मुस्लिम परिवार की भारतीय शाखा मानें या फिर भारत की मिट्टी से जुड़े हुए भारतीय समाज की मुस्लिम शाखा माने इस दुविधा में यहां का मुस्लिम समाज फँसा हुआ है।

- *“Since ideologically a Muslim Should have no country, a practicing Muslim can neither be a nationalist nor an internationalist. He can only be a transitional communalist”.* –श्री. कुप्प.सी. सुदर्शन ,पृष्ठ ७१
- इस्लाम के दो चेहरे हैं। एक आतंकवाद का और दूसरा शांति का। आज तक दुनिया ने इस्लाम का आतंकवाद वाला चेहरा देखा है। अब संसार इस्लाम का शांतिप्रिय रूप देख सके। क्या इस दिशा में प्रयास हो सकते हैं?–श्री. कुप्प.सी. सुदर्शन, पृष्ठ ९८
- इजराइल के नेताओं ने यह भी घोषित किया था कि दुनिया के हर एक देश ने उनके साथ अन्याय किया था। दुनिया में हिन्दुस्थान ही एक मात्र ऐसा देश है जिसने उनका प्रेम पूर्वक स्वागत किया। – दतोपंत ठेंगडी ,पृष्ठ ७४
- जिन मुस्लिम राज्यकर्ताओं ने तलवार के भरोसे जबरन हिन्दुओं को मुसलमान बनाया वे इस्लाम के धार्मिक पुरुष नहीं थे। अपने साम्राज्य की लॉबी मजबूत बनाने के लिए उन्होंने इस्लाम का प्रयोग किया। – दतोपंत ठेंगडी ,पृष्ठ ७५
- अपने-अपने धर्म, मतों को, धार्मिक परंपराओं को अक्षुण्ण रखते हुए मुसलमान धीरे-धीरे इस संस्कृति में सम्मिलित हो रहे थे। हिन्दुओं ने कभी उनको यह नहीं कहा–कि तुम अपना धर्म-मत छोड़ दो, कुरान और हदीस छोड़ दो, मस्जिद जाना बंद करो या हजरत मुहम्मद साहब को मानना छोड़ दो। अपनी सभी धार्मिक मान्यताओं को अक्षुण्ण रखते हुए वे यहां की संस्कृति में आत्मसात हो रहे थे। राजनीतिक कारणों से जहां जहां इस्लाम का प्रयोग किया गया वहां वहां संघर्ष हुआ। किंतु सर्वसाधारण लोक जीवन में यह संघर्ष नहीं था। दोनों एक दूसरे के निकट आ रहे थे। अंग्रेजों की नीति रही फूट डालो और शासन करो। इस नीति के अंतर्गत हिन्दू मुसलमानों में वैमनस्य निर्माण करने का उन्होंने सफल प्रयत्न किया। किंतु कलियुगाब्द ४९५९ (सन् १८५७) में हम हिंदु मुस्लिम एकता का ही दृश्य देखते हैं। – दतोपंत ठेंगडी ,पृष्ठ ७७
- गांधी जी ने राष्ट्रवादी कांग्रेसी मुसलमानों के प्रति उलटी नीति अपनाई। जो कांग्रेस को गाली देंगे, लात मारेंगे, उनके सामने झुकना और जो कांग्रेस के साथ थे उनकी उपेक्षा करना। इसके कारण राष्ट्रीय मुख्यधारा के साथ जो मुसलमान थे उनको लगने लगा कि उनकी उपेक्षा की जा रही है। – दतोपंत ठेंगडी ,पृष्ठ ७८
- भारत को अगर प्रगति के पथ पर अग्रसर होना है तो हिन्दू और मुसलमान तथा ईसाईयों के बीच समन्वय स्थापित होना बहुत आवश्यक है। एक दूसरे के प्रति जो अविश्वास की भावना है, संदेह की मानसिकता है, उसको हटाकर सौहार्द की, समन्वय की तथा राष्ट्रीयता की भावना जागृत करने की आज आवश्यकता है। यह असंभव सा लगता है लेकिन है नहीं। –इंद्रेश कुमार, पृष्ठ ८६

- अब हिन्दू मुस्लिम एकता का एक ही स्वर्णिम माध्यम है अथवा मार्ग है, वह है 'राष्ट्रीयता'। मुसलमान और ईसाई स्वयं को मजहब से उपर उठकर इस देश की धरती, पूर्वजों व परम्पराओं (संस्कृति) से जोड़कर सोचें व व्यवहार करें। इसको इस्लाम का भारतीयकरण व चर्च का स्वदेशीकरण कहेंगे। -इंद्रेश कुमार, पृष्ठ ९९
- भारतीय मुसलमानों व ईसाईयों को अपनी राष्ट्रीय मानसिकता अरबस्तान व रोम से हटा लेनी चाहिए। मस्तक रोम व काबा में सिजदा करेगा अर्थात झुकेगा, परंतु कटेगा हिन्दुस्तान के लिए, वंदना करेगा अपने प्यारे भारत राष्ट्रीय की। —इंद्रेश, पृष्ठ ९९
- मजहब से राष्ट्रीयता का निर्धारण नहीं होता। द्विराष्ट्र के सिद्धांत को खड़ा करना अर्थात् मुसलमान हिन्दू के साथ रह ही नहीं सकता यह कहना और मानना ही गलत है। इस्लाम यदि शांति व भाईचारे का नाम है तो अलग कौम-अलग राष्ट्र के सिद्धांत को मुसलमानों को नकारना होगा। —इंद्रेंश कुमार, पृष्ठ १०१
- सर्वपंथ समभाव की संकल्पना न तो किसी मुस्लिम देश में है और न ही क्रिश्चियन देश में है । यह केवल भारत में ही है। —इंद्रेंश कुमार, पृष्ठ १०३
- आज मुसलमान को जेहाद और आतंकवाद में स्पष्ट अंतर करना होगा, नही ंतो वह नफरत व शक के कटघरे में खड़ा रहेगा। —इंद्रेंश कुमार, पृष्ठ १०४
- आज भारतवर्ष में ३०००के लगभग ऐसे स्थान हैं, जहां पूजास्थल तोड़ कर इमारतें या मस्जिदें बनाई गईं। अधिकांश जगह नमाज नहीं पढ़ी जाती है। हिन्दुओं ने कहा इनमें अयोध्या, काशी और मथुरा को पुनः देवस्थानों में निर्मित करने से सभी पुराने अत्याचार भुलाकर भाईचारे, प्यार मोहब्बत व शांति का नया युग प्रारंभ हो जायेगा। —इंद्रेंश कुमार, पृष्ठ १०५
- जो मुसलमान ईरान, तुर्की तथा अरब आदि से आए हैं, वे ही अल्पसंख्यक हो सकते हैं। विदेशी पूर्वजों की पहचान को पकड़ कर रखने वाला ही अल्पसंख्यक हो सकता है और होता है। ऐसे मुसलमान भारत की मुस्लिम जनसंख्या में दो या तीन प्रतिशत ही होंगे। शेष सभी मुसलमानों के पूर्वज भारतीय हैं, हिन्दू हैं चाहे पूजा पद्धति कोई भी हो। विश्व में किसी भी देश में अल्पसंख्यक उस देश के संदर्भ में विदेशी को कहा जाता है न कि उसी देश के निवासी को। —इंद्रेंश कुमार, पृष्ठ १०६
- आंदोलन का (हिन्दू-मुस्लिम संवाद का) फल कुछ भी हो सकता है। जो भी होगा देश व समाज के भविष्य के लिए बहुत अच्छा होगा। कड़वी, जहरीली खट्टी बातें करेंगे परंतु मुस्करा कर करेंगे। विदा होंगे, फिर मिलने के लिए और एक दिन कड़वी, जहरीली बातें खतम होंगी, प्यार व भाई चारे का मार्ग सामने

होगा। —इंद्रेश कुमार, पृष्ठ ११३

दूसरा पक्ष मुसलमानों के भीतर ही सक्रिय हुआ है। उन्होने मुसलमानों को अल्पसंख्यक करार देकर उन्हें देश की मुख्यधारा से काटने की तथाकथित धर्मनिर्पेक्षियों एवं मुल्ला मौलवियों की साजिशों को लेकर बहस करना शुरू कर दिया है। पिछले दिनों मुसलमानों के संगठन 'माई हिन्दुस्तान' ने देश के अनेक स्थानों पर ऐसी ही तीखी बहसों को जन्म दिया है। बहस से जो मुद्दे उभर कर सामने आ रहे हैं उनमें प्रमुख हैं (१) पूजा पद्धति बदलने से पूर्वज व विरासत कैसे बदल सकते हैं? (२) मजहब बदलने से भाषा कैसे बदल सकती है? (३) पूजा पद्धति बदल लेने मात्र से सांस्कृतिक परिवेश कैसे बदल सकता है?(४) भारतीय मुसलमान केवल पूजा पद्धति बदलने में गोकुशी क्यों कर करेगा? (५) पूजा पद्धति बदलने मात्र से अरबस्तान के नियमों और उपनियमों में जुड़ना जरूरी क्यों हो जाता है? (६) शादी विवाह के मामले में, मौलवी की हैसियत विवाह करवाने तक की हो सकती है, लेकिन जहां तक तलाक, गुजाराभत्ता इत्यादि का प्रश्न है वह मुस्लिम महिलाओं को भी देश के कानून के अनुसार क्यों न मिले? इसमें मुल्ला मौलवी के हस्तक्षेप का क्या स्थान हो सकता है?

(७) देश का हिन्दू और मुसलमान दोनों ही कुछ पीढ़ी पीछे तक खून के रिश्ते में बंधे हैं, तब ओरंगजेब आदि मुसलमान के सगे सम्बन्धी या प्रेरणा स्रोत या जन नायक कैसे हो सकते हैं? इन प्रश्नों पर हो रही बहसों ने मुसलमानों के भीतर तहलका मचाना शुरू कर दिया है। जाहिर है ये प्रश्न मुल्ला मौलवी और गुलाम नबी को ही ज्यादा दंश ....दे रहे हैं, क्योंकि मुल्ला मौलवी आम मुसलमानों की जिंदगी का नियत्रंण करके उसे वोटों की खातिर गुलाम नबी को बेच देते हैं। यह खरीद फरोख्त तभी संभव है यदि मुसलमान को समझा दिया जाए कि एक तो उनके साथ अन्याय हो रहा है और दूसरे वे शासक वर्ग की विरासत से जुड़े हैं, जिसे उन्हें हर हालत में दोबारा प्राप्त करना है। जहां तक अन्याय का सवाल है उस मुद्दे पर तो सभी शोषितों को लड़ना होगा क्योंकि उसके कारण आर्थिक हैं मजहबी नहीं। बल्कि मुल्ला मौलवी और गुलामनबी उन्हें मजहबी घोषित करके संघर्ष की धार को कुंद करना चाहते हैं।

रही बात मुसलमानों के शासक वर्ग से सम्बंधित होने की, कुछ मुसलमान नेता समान्य मुसलमान को भ्रम में डालकर स्वयं शासक जरूर हो जाना चाहते हैं। अब जब यह तीखी बहस शुरू हो गई है तो इसके सुखद परिणाम निकलेंगे ही।

निदेशक, क्षेत्रीय विश्वविद्यालय
शिक्षण केन्द्र धर्मशाला।

अपना बिजली बिल कम करने की शक्ति अब आपके अपने पास

बिजली बचत द्वारा अपना बिजली बिल कम करें

- बिजली का प्रयोग तभी करें जब आवश्यकता हो ।
- विद्युत बतियों को तुरन्त बन्द करें ।
- सजावटी रोशनी का प्रयोग कम करें ।

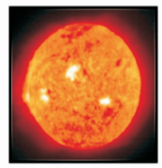

- टी.वी, रेडियो, स्टीरियो सिस्टम और कम्पयूटर को जब काई प्रयोग न कर रहा हो तो बंद कर दें ।
- सूर्य की रोशनी का अधिकतम प्रयोग करें ।

- उपयोग न होन पर विद्युत बतियों एंव उपकरणों को बन्द कर दें ।
- कम्पैक्ट फलोरोसैंट लैम्प (सी.एफ.एल.) का प्रयोग करें क्योंकि इनसे आम बल्बों की अपेक्षा अधिक रोशनी प्राप्त होती है और बिजली खपत काफी कम होती है ।

- बल्ब तथा ट्यूबलाइट को समय-समय पर साफ करते रहें, इससे इनकी क्षमता बढ़ेगी तथा साफ रोशनी मिलेगी ।
- बी.आई.एस. और बी.ई.ई. अंकित उपकरण ही काम में लाएं ।

- विद्युत भार के आवश्यकतानुसार ठीक साईज़ की तारों का प्रयोग करें ।

QUANTUM

हिमाचल प्रदेश राज्य विद्युत परिषद

- पहुँचा रहा है उर्जा को जन-जन तक

एक झलक दिव्य शक्तिधाम महामाया बालासुन्दरी जी त्रिलोकपुर, नाहन, सिरमौर, हिमाचल प्रदेश २०१०

शिवालिक पर्वत श्रृंखलाओं में स्थित श्रद्धालुओं की आस्था का प्रतीक त्रिलोकपुर जहां माता के प्रत्यक्ष चमत्कार होते हैं। जहां सबकी मन मांगी मुरादें पूरी होती हैं।

नव निर्माण संकल्प एवम् आभार

दिव्य स्थल त्रिलोकपुर पधारने वाले समस्त श्रद्धालुओं हेतु मूलभूत सुविधाएं प्रदान करने के लिए न्यास वचनबद्ध है।

मन्दिर न्यास त्रिलोकपुर को दी गई दान राशि आयकर धारा 80–जी के तहत करमुक्त है।

मुख्य मन्दिर का आकर्षण बढ़ाने की योजना में चांदी के पत्रे लगवाने का कार्य करवाया जा रहा है।

- परिसर विस्तार कार्य के अन्तर्गत परिसर का विस्तार किया जा गया है। साथ ही भण्डारा हॉल के विस्तार का कार्य निर्माणधीन है।
- पुण्यार्थ कार्यों की श्रृंखला में लगभग दो करोड़ रू. की लागत से असहाय वृद्धजनों हेतु वृद्धाश्रम का शिलान्यास किया गया है। साथ ही गरीब परिवारों की कन्याओं को विवाह हेतु/शिक्षा हेतु आर्थिक व सामग्री के रूप में सहायता दी जा रही है।
- त्रिलोकपुर को पर्यटन की दृष्टि से विकसित करने हेतु पहाड़ी शैली पर आधारित मु. 1 करोड़ रू. की लागत के संग्रहालय का शिलान्यास रखा गया है।
- मन्दिर में पधारने वाले लाखों यात्रियों हेतु दिन–रात भण्डारा सेवा जिसमें नाश्ते में हलवा व चाय का प्रसाद, जूस का वितरण तथा बासमती चावल का प्रसाद दिया जाता है।
- यात्रियों की बढ़ती संख्या को ध्यान में रखते हुए स्वागत द्वार के समीप विशाल वाहन पार्किंग/शौचालयों का निर्माण प्रस्तावित है जिसमें लगभग 500 हल्के वाहनों व 100 शौचालयों की ईकाइयों का प्रावधान रखा गया है।

पदम सिंह चौहान, भा.प्र.से.
उपायुक्त सिरमौर एवं आयुक्त

अरूण शर्मा, हि.प्र.से
एस.डी.एम. नाहन/सहायक आयुक्त